

रांगेय राघव

पथ का पाप



पथ का पाप

पथ का पाप

रांगेय राघव

राजपाल

मूल्य : .... रुपये (Rs. 000.00)

संस्करण : 2009
ISBN : 978-81-7028-137-7
PATH KA PAAP (Novel) by Rangey Raghav

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110 006
website : www.rajpalpublishing.com
e-mail : mail@rajpalpublishing.com

परिचय

डॉ. रांगेय राघव

17 जनवरी, 1923 को जन्म आगरा में। मूल नाम टी. एन. वी. आचार्य (तिरूमल्लै नम्बाकम् वीर राघव आचार्य)। कुल से दक्षिणात्य लेकिन ढाई शतक से पूर्वज वैर (भरतपुर) के निवासी और वैर, बारोनी गाँवों के जागीरदार। घर की बोली ब्रज, तमिल।

शिक्षा आगरा में। सेंट जॉन्स कॉलेज से 1944 में स्नातकोत्तर और 1948 में आगरा विश्वविद्यालय से गुरु गोरखनाथ पर पीएच.डी.। हिन्दी, अंग्रेजी, ब्रज और संस्कृत पर असाधारण अधिकार।

13 वर्ष की आयु में लेखनारम्भ। 23-24 वर्ष की आयु में ही अभूतपूर्व चर्चा के विषय। 1942 में अकालग्रस्त बंगाल की यात्रा के बाद रिपोर्ताज 'तूफानों के बीच' लिखकर हिन्दी में रिपोर्ताज विधा को जन्म देने वालों में अग्रणी।

साहित्य के अतिरिक्त चित्रकला, संगीत और पुरातत्त्व में विशेष रुचि। साहित्य की प्रायः सभी विधाओं में सिद्धहस्त। मात्र 39 वर्ष की आयु में साहित्य को कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, रिपोर्ताज के अतिरिक्त आलोचना, सभ्यता और संस्कृति पर शोध व व्याख्या के क्षेत्रों की 150 से भी अधिक पुस्तकों समृद्ध किया। अपनी अद्‌भुत प्रतिभा, असाधारण ज्ञान और लेखन क्षमता के लिए सर्वमान्य अद्वितीय लेखक।

संस्कृत रचनाओं का हिन्दी, अंग्रेजी में अनुवाद। विदेशी साहित्य का हिन्दी में अनुवाद। देशी-विदेशी साहित्य का पुनर्लेखन।

7 मई, 1956 को सुलोचना जी से विवाह। 8 फरवरी, 1960 को पुत्री सीमन्तिनी का जन्म। अधिकांश जीवन आगरा, वैर और जयपुर में व्यतीत। आजीवन स्वतन्त्र लेखन।

हिन्दुस्तानी अकादमी पुरस्कार (1951), डालमिया पुरस्कार (1954), उत्तरप्रदेश सरकार पुरस्कार (1957 व 1959), राजस्थान साहित्य अकादमी पुरस्कार (1961) तथा मरणोपरान्त (1966) महात्मा गाँधी पुरस्कार से सम्मानित।

अनेक कृतियाँ अन्य भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनूदित और प्रशंसित।
लम्बी बीमारी के बाद 12 सितम्बर, 1962 में बम्बई में देहांत।

एक

बरौठा गाँव के छप्पर दूर से ही मटमैले दिखाई देते। उनमें किसी-किसी पर बरसात की उजली बूँदों ने अपना ऐसा प्रभाव दिखाया था कि वे काले पेड़-से लगते थे। हवा कभी जब तेज़ बहती और चित्रों से सज्जित बिटौरों से टकराती, उनपर जाकर लोटती तब उनपर चढ़ी बेलों की तोरियाँ हिल उठतीं। खासी आबादी थी और बीच में एक मन्दिर का शिखर उसकी आध्यात्मिक शक्ति का पत्थर-प्रतीक था। घर पक्के भी थे कच्चे भी। कच्चे कई, पक्के कम और अपने ऊपर पुती सफेदी के कारण दूर ही से चमकते-से दिखाई देते थे। किसी समय यह एक बड़ा स्थान था। उस दृष्टि से इसे ऐतिहासिक भी कहा जा सकता है; किन्तु इतिहास अतीत में चला गया था और आज के रहने वालों को उसमें किस्से-कहानियों की सी थोड़ी-सी दिलचस्पी जरूर थी, वरना इस पर कोई भी ध्यान नहीं देता था कि बाईं तरफ गाँव-बाहर की बड़ी बावड़ी किसने बनवाई थी। वे तो बस चैत के मेले में उसमें इकट्ठा होने की बात तक सीमित थे, जब मैना, गूजर इत्यादि टोल के टोल झटके वाले स्वरों से गाते थे, या औरतें बेसुरे गीत गाया करती थीं।

गाँव राजस्थान की सीमा पर था, और उत्तर प्रदेश का नगर आगरा उसके पास ही पड़ता था। आसपास का प्रदेश यदि पन्द्रह मील ऊपर से देखा जाए तो ऐसा लगता, जैसे एक धब्बा यह गाँव था जो हरी और भूरी धरती के बीच में था और दूर एक और मोटा धब्बा आगरा था। वहाँ से शायद यह नहीं दीखता कि सम्राट् अकबर का बनाया बुलन्द दरवाज़ा इस गाँव की बाईं ओर रेलवे लाइन से हटकर खड़ा था। अवश्य आगरे के पास बहती नीली जमना एक धुँधली काली रेखा-सी दिखाई देती। लेकिन यह सब कयास की बात है क्योंकि परिन्दे उपन्यासों में कभी दिलचस्पी नहीं लेते, न वे साम्राज्य बनाते हैं कि धरती की इस तरह देख-रेख करें।

भूरी धरती वह होती, जो खेत होती, या होती बंजर। बरसात में यह भी हरी-भरी हो जाती और फिर पेड़ और भी हरे दिखाई देते। फिर सारे रंग बदलते, फिर पीलापन आता और गर्मी फिर सबको धुँधला-सा कर देती।

मनुष्य भी ऋतुओं की तरह वस्त्र बदलते। गर्मियों में मर्द एक धोती बाँधते, घुटनों तक ऊँची और सिर पर पगड़ी बाँधते, लेकिन औरतें बड़े घेरे की घघरियाँ पहनतीं और ओढ़नी

को ऐसे ओढ़तीं कि लहंगा पीछे से पूरा छिप जाता। उनके घूँघट लम्बे होते। घूँघट बहू की निशानी होती तो बेटी की होती खुला मुँह।

इस गाँव को भी नये ज़माने ने छुआ था। जब से पाकिस्तान से शरणार्थी यहाँ आए थे, उनके साफ कपड़ों ने यहाँ भी असर डाला था और मध्यवर्ग अब सफाई-पसन्द बन चला था। शरणार्थियों ने यहाँ की बोली सीखी थी, यहाँ वालों ने सीखा था कि मेहनत का उपभोग उसकी उपज का भोग था। अब औरतें ऊँच जातों में 'बिलौज' पहनतीं। 'पेटीकोट' भी चलता, मर्दों में ड्राइवर, विद्यार्थी तथा कुछ नकलची कमीज़-पतूलन भी पहनते। गोया वहाँ बिजली भले ही न हो, लेकिन गैस की रोशनियाँ थीं, और 'लौट सीपर' वाले 'फोनगिलास' भी थे।

शहर की तरफ बसें दौड़तीं। उनमें खचाखच भीड़ भरती और वे औरतें जो धूप में काम करने में कभी न थकतीं, मोटर का किराया देते ही कहतीं : "ऐ मोटर वारे! बदबोई से सिर भिन्ना रहा है। गरमी मारे डारै। जल्दी चला।" जब मोटर चलती तो वे सधे मगर खड़े स्वर से अपने माथे और हाथों पर गहनेनुमा बँधी चाँदी की पतली ज़ंजीरों को हिलातीं, बच्चों को जाँघों पर बिठाए गाने लगतीं। यहाँ से बसें आगरे भी जातीं और उधर महुआ हिंडौन होकर करौली भी जातीं। महुए वाली जयपुर-मंडावर से मिला देती और फिर रह ही क्या जाता था। भुसावर और बयाना और रुदावल भी दूर नहीं रहते थे। यों वह बरौठा गाँव अब भी पुराने ढर्रे का बना था। उसके कोठों का संकरा पटाव होता, क्योंकि वे वहाँ चीरियाँ डालते, या 'गाटर' डालने पर चौकों का भी पटाव होता, क्योंकि दुमंज़िले चढ़वाने वाले ज़रा बड़ी बैठक बनवाते। पर घर प्रायः जातियों के अनुकूल बनते। मुहल्ले भी जातियों में बँटे थे और प्रायः ही एक घर से दूसरे घर की देखभाल मुश्किल नहीं थी, क्योंकि वे आँगनदार होते। और छतों या ऊपर के कोठों से झाँकने से दिखना कठिन न होता। पर वह बात लोगों के हिफ्ज़ में थी, उसपर कोई वैसे ही गौर नहीं करता था, जैसे स्कूल मास्टर की औरत को भैंस लिए 'हरा' काटकर सिर पर गट्ठर लाते देखकर कोई ध्यान नहीं देता था। मास्टर स्कूल में मास्टर था, बाहर वह, अगर उसके पास छोटा-सा खेत हुआ, तो उसमें खाद भी आप ही डाल लेता था। शहर की वह बनावट यहाँ नहीं थी, जिसमें 'श्रम' भी 'सम्मान' का अंग था, लेकिन गाँव में इस 'श्रम' को 'महत्त्व' नहीं दिया जाता था, उसे गरीबी का लक्षण और अनिवार्य अंग समझकर स्वीकार कर लिया गया था।

इसलिए जब बौहरे परिवार की बहू जावित्री बावड़ी के हनुमान की तरफ इकली जाती तो कोई नहीं देखता। सोचते, जाती होगी। वह मुँह पर घूँघट काढ़े रहती। प्रायः ही औरतें आती-जातीं। दिन में किसी को कोई भय नहीं था।

पर जब जावित्री ने पीपल के पेड़ के पास के झुरमुट के पास जाते हुए, उस गुँजान छाया में जिस गति से गुज़रना चाहिए था, उससे न निकलकर, कुछ देर में वह रास्ता तय किया और उस ओर से गाँव का छबीला जवान रूपनरायन, निकलता दीखा, सुनार बिहारी

की मूँछें अपने-आप अपनी जवानी पर कुंठित-सी हो गईं और उसने कुछ सन्देह से सिर हिलाया। पर ऐसी कोई ज़्यादा देर भी नहीं हुई थी कि वह कुछ निर्णय कर लेता।

फिर जावित्री का पति किशनलाल तो रूपनरायन का खास दोस्त था। यों रूपनरायण बड़ा ज़रूर था, क्योंकि किशनलाल रूपनरायन की पत्नी सोमोती को भाभी कहता था और इस नाते रूपनरायन के लिए जावित्री का दर्जा 'बहू' का था, पर बिहारी इन बातों को सोचते हुए ऊब गया। वह बढ़ चला। रूपनरायन चला गया तो अपने-आप बिहारी की आँखों ने मुड़ कर देखा कि जावित्री दूर एक पेड़ से लगी खड़ी थी और सामने एक आदमी और था। बिहारी ने गौर से देखा। मंगल था।

मंगल रूपनरायन के खेतों मे हल चलाता था, उसका 'हारी' था और रूपनरायन के खेत भी उस तरफ ही थे, थे ज़रा सन्नाटे-से में। उसकी डौरों पर तो घने पेड़ थे ही, किसी वक्त की खोदी हुई एक कच्ची कुइया ढहकर झेरा बन गयी थी, जिसके चौड़े गड्ढ़े में से लम्बे और घने पेड़ निकल आए थे। उनके पास ही 'खिरान' पड़ता था, दांय होती थी, रास बरसती थी और आदमी फिर नाज इकट्ठा कर लेता था। शायद वे खेत से लौट रहे थे। और तभी मंगल से जावित्री की बातें हो रही थीं, क्योंकि मंगल उसके पड़ोसी का नौकर था और नौकर से पर्दा गाँव में तब होता है, जब वह बड़ा-बूढ़ा हो। मंगल पट्ठा जवान था। अगर वह रूपनरायन का नौकर न होता और उसका-सा ही गोरा भी होता तो गबरू कहलाने से उसे कौन रोक सकता था।

गाँव में औरत पच्चीस की हुई कि पता ही नहीं चलता कि वह चालीस और पच्चीस के बीच कहाँ है। मर्द की जात तीस से पचास तक पता नहीं चलती। सफेद बाल आने लगें तब उसी समय बुढ़ापा शुरू होता है। जवानी बीस और पच्चीस तक हो लेती है। यही बत्तीस एक साल का था बिहारी। उसे लोग बूढ़ों के साथ भी हुक्का पीते हुए देख लेते थे और जवानों की जब भंग घुटती थी तब वह बुजुर्ग बना मिलता था। उसकी दुकान नहीं के बराबर चलती थी, लेकिन गुज़र एक ऐसी चीज़ है जो अकेले आदमी को ज़्यादा तंग नहीं करती, क्योंकि मजबूरी में वक्त की दुहाई देकर अपना मन मार लेना बहुत कठिन काम नहीं होता और काल्पनिक भविष्य की सुखद आशाओं के सपनों पर कुठाराघात करने वाला भी कोई साझेदार नहीं होता। वह रामलाल का दोस्त था। रामलाल किशनलाल का भाई था छोटा, अतः उस परिवार के प्रति अनजाने के मान-सम्मान में बिहारी सुनार को अनुरक्ति थी। उसी घर में तीन भाई हैं, एक रंडुआ रामलाल, छोटा है कंवारा मदनलाल। जो गिरस्ती की धुरी है, सो किशनलाल, क्योंकि उसकी ब्याहता घर है। उसी की पत्नी यों सूने रास्ते चले!

गाँव में मसल मशहूर है कि बैल को हल, लड़के को मदरसा और लड़की को सुसराल ठीक रखते हैं। लेकिन सुसराल तो असली वह है जहाँ सास हो। रामलाल तो रहे दिन-भर दुकान, मदन की बिसात क्या! और किशनलाल!

यह याद आते ही बिहारी को न जाने क्यों नफरत से फुरफुरी-सी हो आई। जैसा वह, वैसी उसकी औरत!

कैसी ऐंड के खड़ी बतराती है। मरा घूँघट भी ऐसा कि जो चाहे देख ले। मंगल भी कैसा लट्टू खड़ा था!

बिहारी अब उत्तर की तरफ से मुड़ गया और खिरकान वाले कुएँ के पास से बढ़ा कि उसे किशनलाल मिला। बत्तीस एक साल का युवक।

उसने कहा— "राम-राम भैया!"

"राम-राम!" बिहारी ने कहा—"बहुत पीछे रह गए तुम?"

किशनलाल ने चौंककर कहा—"पीछे? कैसे?"

"मैंने जानी, कहीं दोनों जा रहे थे।"

गाँव का रिवाज है, अक्सर ही दीखेगा कि गाँववाला इस मामले में अँग्रेज़ होता है कि अपनी औरत को संग ही लेकर चलता है, लेकिन थोड़ा देसी होता है कि आप आगे चलता है, औरत पीछे चलती है। अँग्रेज़ों में मर्द बोझा उठाकर चलता है, गाँववालों में बक्स औरत लेकर चलती है।

"दोनों कौन?" किशनलाल ने पूछा।

"तुम और बहू।"

"नहीं तो?"

"सो ही तो! मैंने जानी पानी-वानी पीने रुक गए होंगे। तो बहू इधर कहाँ जा रही थी? लोटा भी हाथ में न था!"

उसने व्यंग्य को समझा और कहा : "हनुमानजी के गई होगी।"

बिहारी ने बात बदली—"चलते हो?"

"आज किधर?"

"वही मियाँ की दौड़ मस्जिद तक।"

"भइया के पास?"

"और क्या?"

"खूब बैठक जमती है?" व्यंग्य छलका।

बिहारी समझा नहीं, बोला—"यह तो दिल लगने की बात है। अपने राम तो पीछे हटते नहीं। दूध तो वो जो खटास से फटै नहीं। निभाना जानते हैं।"

किशनलाल मन ही मन उससे रुष्ट हो गया।

बिहारी ने फिर विषय बदला।

बोला—"जे बात सच है?"

"कौन–सी?"

"तुम सहर जा रहे हो?"

किशनलाल हँसा। और बोला—“बात यह है कि भइया बड़े सीधे आदमी हैं।”

“अरे यह क्या हमें बताते हो! सोना है। दूध का धुला। बजाजी में कम बेईमानी है? मगर रामलाल! मजाल है। न देखा, न सुना! हमारी अपने यार से पटती ही इसलिए है।”

उसने गर्व से सिर हिलाया। किशनलाल मन ही मन खिसिया गया। उसने झेंप मिटाते हुए कहा—“पर इतने धर्मात्मा हैं। इसी से तो डर लगता है।”

“डर कैसा?”

”घर-गिरस्ती के आदमी,” उसने कहा—“देखो! लड़ाई में कण्ट्रोल की दुकान मिली थी। साफ वापिस कर दी कि इसमें बिलैक के बिना बचत नहीं है, सो हम करेंगे नहीं।”

“ठीक है भइया, तुम्हारे आगे-पीछे नहीं, भइया के आगे पीछे नहीं, सो कोई चिन्ता नहीं। अकेला आदमी धर्मात्मा बन सकता है, पर दुनिया में रहकर गिरस्ती चलाकर भी बना रहे, वही कठिन काम है।”

“यह तो मन का भाव है किशनलाल! नहीं कुछ में सब कुछ है, नहीं तो सब कुछ में भी कुछ नहीं है।”

यह घोर दार्शनिक बात कहकर बिहारी ने शून्य दृष्टि से आकाश की ओर देखा और फिर कहा—“क्यों भइया! एक बात है।”

किशनलाल मन ही मन तैयार हो गया।

बिहारी ने कहा—“अभी मदन ने दरखास दे दी कि बड़े भाई रामलाल के नाम जो सारी पुस्तैनी ज़मीन की टीप है, सो तीनों में बँटे।”

“हाँ, मैंने तो कहा भी था।” किशनलाल ने कहा—“ऐसा मत कर। मगर माना नहीं। दे दी?” उसने कुछ आश्चर्य से पूछा।

“राम-राम!” बिहारी ने कहा—“ऐसे देवता-से भाई पर भी सन्देह! बामनों में कोई है गाँव में, जो रामलाल का मुकाबला करे! बहू मरी, तब से उसने तो जोग-सा साध लिया है। वह अपने लिए कर ही क्या रहा है? कुछ नहीं। सोते-जागते, बस तुम दोनों की ही चिन्ता लगी रहती है उसे तो। किशनलाल! ऐसे आदमी सदा नहीं मिलते।” फिर उसने हठात् कहा—“अच्छा! मदन ने तुमसे भी नहीं कहा कि अर्ज़ी दे दी? उसने तो अपनी काश्त की बात पटवारी से कही। यों तो पटवारी ले-दे के कर देता, मगर रामलाल की काश्त है, चार बरस से उज़रदारी नहीं, फिर वो कैसे अचानक बदल देता? मैं समझता हूँ उसने कुछ माँगा भी ज़्यादा होगा। मदन ने क्या किया जानते हो?”

फिर उसने उसे बड़ी सन्देह-भरी दृष्टि से घूरा। किशनलाल के मन में घृणा-सी उमड़ आई। मगर वह छिपा गया। बोला—“तुम जाने कहाँ से हर बात समझ-जान जाते हो भइया। और वह भी परायों की!”

“पराये! रामलाल मेरा पराया है!” बिहारी ने अत्यन्त आहत होकर कहा, “उसके लिए मेरे पास जो है, सो हाज़िर है। और ऐसे के लिए जान चली जाए तो क्या?” उसने फिर

कहा—“सो मदन ने रूपनरायन की तहसील सा’ब से जान-पहचान का फायदा उठाया। उन्होंने हुकम लिखा कि पटवारी फिर जाँच करै और उसके मुताबिक रिपोर्ट दे। वे तो समझे कि कोई बात नहीं, मदन झट दस्ती कागज़ ले आया और जानते हो, उसने क्या किया?”

किशनलाल का मुख उतर-सा गया, मगर वह बोला—“क्या किया उसने?”

“गज़ब!” बिहारी ने कहा—“उस पर हाथ से बढ़ा दिया अपने—ज़मीन तीन हिस्सों में बाँट दी जाए और फिर अमल दराज़ का कागज़ पटवारी को दिया। उसने इन्कार कर दिया कि इस फैसलेहुकम का मतलब ही कुछ नहीं निकलता। वह तो कहो, रूपनरायन ने कागज़ दबवा दिया, तहसीलदार सा’ब से कह-सुनकर, वरना मदन को जेल हो जाती। जालसाज़ी ठहरी किशनलाल। है न?”

किशनलाल ने कहा—“सच! ऐसा हुआ?”

“तुम्हें नहीं पता कुछ?”

“मुझसे कब पूछता है।”

बिहारी ने कहा—“मैंने तभी तो उससे पूछा। बोला, यह लिखावट भइया किशनलाल की है!”

“राम-राम!” किशनलाल रुआंसा हो गया—“ऐसा धूर्त है वह! मैं ऐसा कर सकता हूँ बिहारी भैया!”

“यही रामलाल ने कहा—कि हो न हो जो मदन को नचा रहा है, वरना इसमें इत्ती अकल कहाँ जो कचहरियों की धूल को सिर-माथे दे।” उसने फिर पैनी आँखों से देखा, मगर किशनलाल मन ही मन विक्षोभ से भर गया था। उसने अपने को नियन्त्रित किया और सहसा ही वह मुस्करा दिया। और बोला—“दुनिया भी कैसी अजीब है। भइया को मुझपर सन्देह हुआ?”

“हुआ तो नहीं।”

“हाथ से सरकारी कागज़ में बढ़ाना!!”

“जेल थी जेल। तभी तो भइया के खिलाफ भाई चुप रह गया।” यह कहकर बिहारी ने नथुने फुलाकर मानो हवा को सूँघा। किशनलाल को लगा जैसे कोई शिकारी कुत्ता उसके पीछे लग गया हो। उसे अत्यन्त विक्षोभ हुआ। उसने बिहारी को ऐसे देखा जैसे वह कोई बौना था, तुच्छ था, और मूर्ख तो था ही।

उसने कहा : “बिहारी भइया! अब तुमने कह दी। मैं तो यों नहीं कहता था कि घर की बात बाहर वालों से क्यों कहूँ। पर तुम अब सब जानते ही हो। इतना है कि अपने ही तक रखना।”

बिहारी को ‘बाहर वाला’ कहकर उसे ‘अपने ही तक रखने’ की सलाह देकर वह मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ, क्योंकि इसमें एकसाथ दो चोटें हो गईं, और चोटें भी ऐसी, जो

बिहारी के मन को ऐसे रौंद गईं जैसे दो भारी बूट उसके दिल को कुचल गए। वह बोला : “मैं तो रामलाल को पराया नहीं मानता! और किसी से कहूँगा क्यों? सच पूछो तो मैं तो इतनी बात भी न कहता। पर तुम्हारी इज़्ज़त को अपनी इज़्ज़त समझता हूँ। कोई तुम्हारे घर के खिलाफ कुछ कहे, मुझे सुनने की बरदास नहीं है। उसी से कह रहा था कि बहू की बात ठीक नहीं लगी मुझे।”

किशनलाल ने त्यौरी चढ़ाकर पूछा : “क्या बात है?”

“अकेले भेज देते हो सब जगह!”

“और कुछ?”

“अब जो होगा वह भी बता देंगे।”

किशनलाल का मन भड़क उठा।

उसने कहा : “इस गाँव की-सी तो कोई जगह ही नहीं होगी। तभी मैं जाने की सोच रहा था।”

“ऐं!” वह चौंका, “कहाँ”

“अभी तो अकेला ही जाऊँगा।” किशनलाल ने सहसा स्वर बदलकर कहा : “एक बात कहूँ बिहारी भइया! दुनिया बहुत बुरी है। इसमें किसी का भी भरोसा नहीं है। बस, तुमसे कहता हूँ। वचन दो कि कहोगे नहीं।”

“मैं क्यों कहने लगा!”

“भइया से भी नहीं।”

“तो देखो!” उसने जेब से एक कड़ा निकाला जो सोने के पीलेपन से चमक रहा था। फिर कहा, “यह है, बहू के मैके से मिला था। आज इसे खरीद लो, या बिकवा दो।”

बिहारी कुछ अवाक्-सा रह गया। फिर कहा, “क्यों? तुम्हें ऐसी क्या ज़रूरत आ पड़ी?”

“अब तुम्हें क्या बताऊँ! भइया तो बजाजी करते हैं। अब मैं इस ज़रा-सी दूकान में क्या करूँ? कल को मदन का हिस्सा होगा। मैं तो कमा खाऊँगा। हाथ आगे पसारकर भइया को दुःख नहीं देना चाहता। वे हमें पालें तो हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें। मैं कहता हूँ, हमारा भी तो उनके लिए कुछ फरज़ है बात तो तब जमे जब हम कमाएँ, वे खाएँ। इसे बेच रुपया आए, तो थोड़ी बौहरगत जमाऊँ।”

बिहारी ने मुस्कराकर कहा, “इसमें क्या मुसकिल है। चलो बाज़ार, अभीबिकवा दूँ।”

“तुम्हीं न ले लो, घर के घर में माल रहे। किसी को पता भी न चले। ज़रूरत पड़े तो बिरादरी में बैठने-उठने के मौके पर माँग भी लें।”

“तुम भी कैसी बातें करते हो!” बिहारी ने इस अपनत्व से गद्गद् होकर कहा, “मेरे पास होते तो तुम्हारे लिए इन्कार था? रुपया होता तो दुकान ही अच्छी नहीं चलती? लोग मुझे सोना देते डरते हैं कि इकली जान है, कौन-से खूँटे से बँधा है, जो इस पर भरोसा करें।

वो तो कहो, लोग जाएँगे नत्थी सुनार के पास। ज़माना जानता है, चोरी का माल औने-पौने कौड़ियों के मोल लेकर गलाता है। हवेली चिनवा ली! औरत सिर में खुसबोई का तेल लगाती है। वह देता है पुलिस को।” बिहारी ने सिर हिलाया।

“तो तुम उसको बेचोगे?” किशनलाल ने कहा।

“नहीं, बदरी को दे दूँगा। बोहरा विश्वास का आदमी है।”

“हाँ, यह ठीक है। पर मेरा नाम न लेना।” किशनलाल ने कहा, “मैं चलूँ?”

“तुम जाओ। कब मिलोगे?”

“सँझा को।”

बिहारी चला गया तब किशनलाल हँसा और उसे जाते हुए देखता रहा।

बिहारी मुड़ गया तब किशनलाल जावित्री के प्रति सन्देह-भरा हृदय लिए हनुमान जी की ओर चल पड़ा। वह राह में ही मिली। अकेली थी। किशनलाल ने कहा, “हो आई?”

उसने कहा, “हाँ। कहते हैं, एक बाबाजी आए हैं पहाड़ के पीछे। बड़ी मानता है उनकी।”

किशनलाल झुँझला उठा। उस स्त्री को सिवाय बच्चे की चाहना के और कुछ जैसे था ही नहीं।

“चलोगे?” वह बोली।

“मदन को लेकर जाना।” उसने कहा, “मुझे ज़रूरी काम से जाना है।”

वह फिर मुड़ गया। उसका मन और ज़्यादा खट्टा हो गया था।

बिहारी ने बदरी के घर में प्रवेश किया।

“कहो!” बदरी ने कहा, “अबकी तो भूल ही गए।”

“कहाँ!” उसने एकान्त देख कहा, “परेसानी थी।”

“सो कैसी?”

“किसी से कहेगा तो नहीं?”

“मैं क्यों कहने लगा।”

बिहारी ने कड़ा निकाला।

“क्यों?” बदरी ने मन ही मन प्रसन्न होकर कहा, “बनने आया है!”

“अरे नहीं। एक पड़ा था पुराना।” लेकिन वह झूठ बोल रहा था। यह उसके चेहरे पर साफ था।

“बेचोगे?” बदरी ने कहा, “नत्थी के चले जाओ।”

“रखूँगा।”

“यह तो सोने का है।” उसने लेकर कहा।

“तभी तो तुम्हारे पास आया। रख लो। ठोस है। दे दो जो देते हो! पर सुनो, किसी से कहना नहीं।”

हठात् वह रुक गया। द्वार पर छाया दीखी। कड़ा हाथ में दिख रहा था। देखा, किशनलाल था। उसने कड़ा बदरी की ओर सरका दिया। बदरी ने हाथ में लेकर रखा और कहा, “कैसे आए पंडितजी!”

किशनलाल की आँखें जैसे कड़े पर थीं। बोला, “काम में लगे हो तो फिर आऊँ!”

“नहीं कहो।”

“भइया से कर लो बातें। मैं यहीं बैठ जाता हूँ।” वह पोरी में बैठ गया।

कुछ देर में ही बदरी बिहारी को छोड़ने आया और वह किशनलाल को ले गया।

“कैसे आए?”

“यहाँ कौन है?”

“रंडुए के घर कौन होगा!” बदरी हँसा, “तुम कहो।”

किशनलाल ने बहुत उदासी से एक कड़ा जेब से निकाला और सामने रखा।

बदरी ने देखा कि यह कड़ा ठीक पहले वाले का जोड़ा था। वह समझ नहीं पाया।

“हूँ।” उसने कहा, “फिर?”

“रख लो।”

“तुम्हारा ही है?”

“क्या मतलब?” किशन ने तड़पकर कहा।

बदरी सहम गया। उसने कुछ नहीं कहा।

किशनलाल ने कहा, “इसका जोड़ा चोरी हो गया है बौहरे! जिसने चुराया है वह भी मुझसे छिपा नहीं है। पर मेरा मुँह बन्द है, क्योंकि मेरे घर में ही मेरा विश्वास नहीं है। समझे! तुम अपने आदमी हो, इसलिए तुमसे कहता हूँ। घरवाली कितना-कितना न रोई होगी। मगर क्या किया जाए! आज कड़ा लाया हूँ, कल सारे ज़ेवर भी ला सकता हूँ। अलग रहने के लिए इन्तज़ाम तो करना ही है। कुछ भी हो!”

बदरी को रस आया। बोला, “कैसे? कैसे? बात क्या हुई?”

“होनी थी सो हुई। अब क्या कहना है उसका!” किशनलाल ने विरक्त स्वर से कहा, “लेते हो? खरीद ही जो लो! आज चोर साहूकार बनते हैं। मैं सब जानता हूँ मगर करूँ क्या! तुम यह न समझो कि सोने का नहीं है।” उसने स्वर बदलकर कहा, “सोने का माल अभी हुआ नहीं असली, पर यह भी ख़रा है ख़रा। परख लो! चोरी का माल धरने नहीं आया। यह बिहारी कैसे आया?”

“उसका एक काम था।” बौहरे ने टाला।

“कोई बात ज़रूर होगी।”

“थी।”

किशनलाल इस उत्तर से आहत हुआ। बोला, “होगी जी। अपने को क्या! अपने को जब गँवाना ही है, तब चिन्ता क्या! घर के चोर से कौन जीता है।”

"तो बात क्या हुई?"

"तुम तो बताते नहीं। पर मैं बताता हूँ कि सताया हुआ हूँ। बदला नहीं लूँगा, यह सच है, मगर भगवान तो नहीं छोड़ेगा?"

"कुछ चोरी-वोरी हो गई?"

"ओह! और रोना ही क्या है!"

"कौन ले गया?"

"जिसके हाथ पड़े, वो ले जाए!" उसने कहा, "छोड़ो, क्या दोगे?"

बौहरे बदरी को परनिंदा की कसर ने बहुत दुःख दिया। बोला, "किशनलाल पंडित! तुम अपने ही आदमी हो। ठहरो। आज एक आदमी की परख हो जाए। किसी से कहोगे तो नहीं?"

"मैं क्यों कहूँ! जो कहे सो तले को जाए। मेरा क्या सिर फिरता है!"

"बौहरे भीतर गया। लौटकर बैठा और बोला, "कड़ा निकालो।"

उसने कड़ा रख दिया।

बौहरे ने उसके बगल में एक और रख दिया। वह समझा था कि किशनलाल चौंकेगा। लेकिन वह मुस्करा दिया, आँखों में अथाह वेदना लिए। फिर बोल नहीं, सिर हिलाया, जैसे 'पता' है।

"यही है जोड़ा?"

"हाँ, बौहरे!"

"कौन लाया?"

"नाम मत बुलवाओ! तुम्हें खुद पता है।"

"तो चुप क्यों हो?"

"मैं भइया के सामने कैसे सिर उठा सकता हूँ। जो चाहें करें।"

"और यही क्या भरोसा है कि वह ही नहीं कर रहा है?"

"फिर भी जिसे भगवान ने पहले भेजा, उस भगवान की कोई तो मर्ज़ी रही ही होगी। हमें तो सब सहना है।"

बदरी ने सिर हिलाया।

किशनलाल ने दोनों कड़े उठाकर जेब में रखकर कहा, "जी में आता है, अभी भइया के सामने चला जाऊँ, सामने धर दूँ। पर तुमने दोस्ती में यह बात बताई है। मैं तुम्हारी बौहरगत में बट्टा नहीं आने दूँगा।" यह कहकर दोनों कड़े उसने फिर निकाल कर रख दिए।

बदरी ने उठा लिए और कहा, "तुममें बहुत समवाई है पंडित।"

"फिर भी बुरा नाम तो हमें ही मिलता है। आज न सही कल खबर आएगी तुम्हारे पास। घर के-से आदमी हो। तुमसे क्या छिपाना! मदन से भइया के खिलाफ ज़मीन की टीप बदलने की अर्ज़ी दिला दी।"

“किसने?”

“बस समझ जाओ! नाम लिवाकर क्या मिल जाएगा। धरम और गंगा की दुहाई, तहसीलदार ने तो रूपनरायन के मेलजोल से मदन को दस्ती कागज़ दे दिया, इन्होंने अपनी कलम से या मदन से सरकारी हुक्म के बीच में कुछ और बढ़वा दिया। पकड़े गए। मदन की जेल की नौबत आ गई। फिर कह-सुनकर रफै-दफै करवाना पड़ा। तुम देखो। इनके पास कुछ नहीं है, और भइया सीधे हैं तो हमारे घर ही से इन्हें पनपना है। अभी क्या है! मुँह नहीं खुलता शर्म से।”

ज़्यादा दिलचस्प बात की उम्मीद में बदरी का मुँह खुल गया। बोला, “क्यों, क्यों? क्या?”

“बस, समझ लो! कह नहीं सकते ऐसा दर्द समाया हुआ है भीतर! कोई और होता तो कतल हो जाता। मगर भइया की इसमें साज़िश है। खून का घूँट पीकर रहना पड़ता है।”

बदरी ने सिर हिलाया और कहा, “यो नहीं चलने का!”

जब किशनलाल लौटा तो जेब में नोट थे। घर आकर उसने जेबों से दो कड़े निकालकर बक्स में रखे और ताला बन्द कर दिया। जावित्री आँखों में काजल लगाए मुँह दिखाती-छिपाती रोटी के लिए पूछने आई।

“अरी!” किशनलाल ने कहा, “नहा तो लूँ। बिना नहाए बामन खा ले तो फिर बात ही क्या! सब कुछ तो छूट गया इस जात से, बस नहाना रह गया। तुझे नहाए कितने दिन हुए?”

वह हँसकर बोली, “परसों एक साल होगा।”

दोनों हँसे।

नहा-धो आया किशनलाल कुएँ पर से। गरम-गरम रोटी खाने बैठा। पूछा, “मदन और भइया खा गए?”

“हाँ!” जावित्री ने तीखी दृष्टि से देखकर कहा, “साग अच्छा है! देखना! लालाजी कहते थे, नमक ज़्यादा है।”

“मदन!!” उसने लम्बा स्वर खींचकर कहा, “अब तो उसकी बहू ही पकाएगी, तभी उसे भाएगा। बात यह है कि अपनी औरत कैसा भी पकाए, अच्छा लगता है।”

“तो,” जावित्री ने चिढ़कर कहा, “तुम्हारा मतलब है, मैं अच्छा नहीं पकाती?”

वह हँसा। बोला, “वह भी आया होगा खाने के वक्त।”

“कौन? जेठजी?”

“जेठजी!!” उसने व्यंग्य से कहा, “कहते हैं—गरीब की जोरू सबकी भाभी, अब उल्टा हिसाब है। सभी जेठ लगते हैं।”

“क्या कहते हो! पर मैं कहती हूँ कि जेठजी इस बिहारी को इत्ता क्यों खिलाते हैं?”

“मर्ज़ी उनकी। दूकान के मालिक हैं। ज़मीन उनके नाम है।”

“और हमारा हिस्सा नहीं है?”

“कहते हैं, मदन की शादी कर दूँ, तब तुम दोनों को सब कुछ सौंपकरभजन करूँ!”

खाना खाकर वह लेटकर बीड़ी पीने लगा। जावित्री बैठकर पाँव दबाने लगी।

जावित्री ने अपनी कजरारी आँखों से देखते हुए कहा, “देखो!! फिर कब जाऊँ?”

“कहाँ?”

जावित्री अप्रतिभ हुई। जहाँ से बात छोड़ी थी उसने उससे, आगे से शुरू की, यह सोचकर कि उसका प्रत्येक शब्द उसके पति ने ध्यान से सुना था। किन्तु यहाँ उसने उदासीनता पाई।

“कहीं नहीं,” झुँझलाकर कहा उसने, “तुम तो कुछ दिलचस्पी ही नहीं लेते!”

“क्या मतलब? कुछ कहो भी! औरतों का भी बड़ा अजीब स्वभाव होता है।”

“देखो, सारी औरतों में मुझे मत रखना।” उसने उसके पाँवों को गूँधते हुए तिनककर कहा।

“तो कहो भी!”

“कहूँ क्या, दिन-रात रोटी सेंकते मरती हूँ। दो घड़ी बात करने बैठती हूँ, तो काटने दौड़ते हो।”

“तू क्या रोटी करती है, कुल चार-पाँच आदमी हैं। औरों को देख। पर बात बता न?”

वह नहीं बोली।

“तू बाबाजी के यहाँ मदन को लेकर कब जाएगी?”

“मैं कहूँ, तुम चलो मेरे साथ।”

“क्यों?”

“मैं उनसे कहूँगी कैसे? लालाजी से कहना पड़ेगा। मुझे शरम आएगी। तुम कह देना।”

“और भी तो जाती होंगी।”

“हाँ, हाँ, क्यों नहीं।”

“तो मुझे शरम लगेगी। तू औरतों के साथ ही हो आना।”

उसने करवट बदल ली। वह प्रसन्न हो गई। चाहती भी यही थी। संग-साथियों में जो आज़ादी थी वह पति के साथ कहाँ मिलती। बोली, “दो रुपये खर्च होंगे।”

“होने दे! घर में उजाला होगा। बंस चलेगा।”

वह पुलकित हो उठी।

बोली, “मैं पूछ आती हूँ। नाइन चम्पो भी जाने की कहती थी। उसके बच्चे को सूखा रोग है। मरी, कई दवाइयां कीं; कुछ लाभ न हुआ। वो तेलिन है न! कहती थी कि मक्खी मारकर खिलाओ, और रोज़ एक-एक बढ़ाती जाओ। जिस दिन कै हो जाए उसी दिन रोग चला जाएगा। पर चम्पो को घिन आती है। कहती है, मरी मक्खी कैसे खिलाएगी! मैंने तो

कहा था कि भैना! इलाज में क्या दोस। जी कड़ा कर ले। औलाद से बढ़कर क्या है!—पर उसकी समझ में नहीं आती। कहने लगी—भैना, ऐसा तो न करूँगी, भले ही देने वाला उठा ले। देना होगा, फिर देगा।—वह उसका पाँचवां भी तो है।" यह कह उसने एक लम्बी साँस ली और कहा, "भगवान देता है तो बाँटकर नहीं देता!"

पर वह शायद औंघ में था। वह उठ गयी। दुपहर ढलने लगी थी कि अचानक चूड़ियों के बजने से किशनलाल की आँखें खुल गईं। वह उठ बैठा। बीड़ी सुलगाई, उठा और आले में रखे कंघे को बालों में फेरा। तभी दीवार में एक संध पर नज़र पड़ी। पुरानी चिनाई में रखे काठ के तखते रखकर कोई खिड़की बन्द कर दी गई थी। अचानक ही संध के पीछे कोई हिला। उसने देखा तो देखता ही रह गया। बिजली-सी कौंध गई।

सोमोती नहा रही थी। रूपनरायन की पत्नी, जिसे वह भाभी कहता था। रूपनरायन उसका मित्र था और गहरा था। परन्तु हज़ार बार माथे तक घूँघट ढके रूप को देखकर भी कभी किशनलाल को यह अन्दाज़ नहीं हुआ था कि सोमोती इतनी सुन्दर है। मामूली ईंटों की पौरी में से घुसकर जैसे कोई अकस्मात् संगमरमर के कमरे में पहुँच जाए, तो अपने मन की सन्तुलित अवस्था को खो बैठता है, उसी प्रकार उसकी भी आँखें अटककर रह गईं।

सोमोती नहाकर चली गई। गाँव की बहुएँ गुसलखानों में नहीं नहातीं, आड़ माने होता है गुसलाखना, वह तो चली गई किन्तु किशनलाल का मन न जाने क्यों भीतर ही भीतर छोटा होने लगा। वह हट गया। वह यह नहीं जान सका कि जब जावित्री की आहट सुनाई दी, तब तक कैसे वह करीब सात-आठ बीड़ियाँ फूँक चुका था!

जावित्री ने भीतर आकर कहा, "अभी तक सो रहे हो! बाहर देखो। जेठजी खड़े हैं।"

एक नये जेठ की कल्पना उसे अच्छी नहीं लगी। पर वह बोला नहीं। देखा, रूपनरायन था। बोला, "जैराम उस्ताद!"

किशनलाल मुस्कराया और बोला, "आओ यार! कहाँ का इन्तज़ार करा डाला तुमने भी!"

रूपनरायन आ बैठा।

बीड़ियाँ सुलग उठीं।

जावित्री कुछ पूछने आई कि उसने देखा, दोनों दोस्त पौरी तक पहुँच चुके थे। वह रूप की पीठ देखती रही। उसे रूप का सुन्दर मुख अच्छा लगता था। जाने क्यों उसे अपने पति के मुख पर सज्जनता दिखाई नहीं पड़ती थी, जो रूप के मुख पर लगती थी। यद्यपि सारा गाँव किशन के पक्ष में ही बोलता, क्योंकि किशन के पास रूप की भाँति कोई आटा पीसने की चक्की न थी जिस पर गेहूँ के साथ चुपचाप मक्का पिस जाता या कटौती कटती, न उसकी तरह दुकान ही थी घी, तेल परचून की जहाँ कई तरह की जोड़-तोड़दार चालाकियाँ होतीं। ज़मीन दोनों के पास थी। रूप की ज़मीन मंगल जोतता, जब मंगल अकड़ता तो रूप दो हाथ देकर स्वयं हल छीन लेता, परन्तु प्रायः मंगल नौकरी छोड़कर लौट आता, क्योंकि

जब वह हारी बनकर रहता तब वह धनी के घर ही खाता और सोमोती के हाथ की सिंकी रोटी उसे बहुत भाती। सोमोती उसे भैंस दुहने पर दूध भी देती और मट्ठा तो महेरी में खिलाती ही। इस मामले में वह सोमोती के हृदय की विशालता को स्वीकार करता। ज़माना महँगा था, आटा नहीं मिलता था, लेकिन रूप के घर उसकी कमी नहीं थी। वह व्यक्ति था कुशल। उसने मशीन का काम भी सीख लिया था। जब चक्की में खराबी आती, स्वयं ठीक कर लेता, न होता तो दुपहर की बस में चलकर तीन की गाड़ी से चलता और शाम को आगरे पहुँच पहले तो बेलनगंज में पुर्ज़े खरीदता और रात को अगर गाड़ी का टैम निकल जाता तो अपने मित्र वसन्त टाकीज़ के गेटकीपर के पास थैला रखकर सिनेमा देख, सबेरे वाली गाड़ी पकड़ फिर दुपहर तक आ जाता; जबकि और चक्की वालों के ड्राइवर 2 रुपये की चीज़ के 4 रुपये वसूल करते और खुराक में अनाप-शनाप वसूल करके उन्हें घिस्सा देते। जावित्री उसे अत्यन्त सफल व्यक्ति मानती थी क्योंकि सोमोती के ऊपर न जेठ था, न देवर, न भविष्य में आने वाली देवरानी का खतरा था, न बिहारी जैसे शुभचिन्तक थे, जो उसकी स्वतन्त्र गति में बाधा डालते थे। वह भी जानती थी कि बिहारी उसे आते-जाते देख घूरता था, पर सोमोती कैसी विचित्र थी कि उसे घूमने-फिरने का शौक नहीं था। उसका बाप एक हलवाई की दुकान करने वाला बामन था। कथा भी अच्छी बांचता था। उसकी पत्नी मर चुकी थी। वह अपनी बेटी को बेटा करके पालता था। खालिस दूध पिलाकर उसने बेटी को पाला और वह अमिया-सी जवानी-भरी मचकने लगी। उसकी आँखें कैसी बड़ी-बड़ी थीं। बोलती थी तो करारे स्वर से। उसमें हुकूमत की बू थी। और जावित्री की दृष्टि में वह भाग्यवान थी, क्योंकि उसके दो बच्चे हो चुके थे, यह और बात थी कि अपने भाग्य से वे बचते नहीं थे। परन्तु यह सोमोती के स्त्रीत्व पर तो दोष नहीं था। यह तो नहीं था कि कोई उसके घर भी ऐसे आसमान की तरफ आँखें उठाकर कहता हो जैसे जेठ रामलाल कहते थे—देखो, जब किशनलाल के बच्चा होगा...जाने भगवान वो दिन कब आएगा। विवाह के पाँच-छः साल बीत चुके थे। बहुत-सी स्त्रियाँ तो बड़ी दया-सी कर उठती थीं, जिससे जावित्री के मन में तीर-सा लगता था। वह यह कल्पना में भी नहीं सुनना चाहती थी कि वह बाँझ थी। अब तो मेहतरानी भी आती तो एक नुस्खा बताती। कंजरिया—‘ऐऽऽमाऽऽऽईऽऽऽ’ करके जो पतले तीखे स्वर में भीख माँगने आई, बातों ही बातों में सिद्धन बन गई। दूसरे दिन जाने क्या ताँत कसके एक अजीब तरह का सूप लाकर बोली, “भैना, पेट पै बाँध के रात-भर सोइयो।” सोई जावित्री। कुछ नहीं हुआ।

यह जीवन भी समस्याओं का पुंज है। पुरुष की समस्याओं का अन्त मृत्यु से पास आता है, स्त्री का जन्म से। अनेक प्रकार की उलझनें तो हमारे दैनंदिन जीवन में केवल हमारे दृष्टिकोण के कारण जन्म लेती हैं। जावित्री ने कभी समस्या को मुसीबत नहीं समझा, क्योंकि उसकी समस्या मन का दुःख था।

परन्तु किशनलाल घर से निकलकर जैसे स्वतन्त्र हो गया। उसने रूप से कहा, “चलैं?”

"कहाँ?"

"जहाँ पहले चलै थे।"

"कौन एक जगह रही वह?"

"कोई नहीं, जिधर किस्मत ले जाए!"

"तो फिर आज भी चल।"

"यार उस्ताद! डर लगता है।"

"क्यों?"

"कोई देख ले तो!"

"अभी तक किसी ने देखा है?"

"लेकिन जिस दिन देखना होगा, देख ही लेगा।"

"ओहो! किशनलाल दार्शनिक की तरह हँसा। बोला, "जिस दिन मरना होगा बेटा, घर पर भी मरेंगे, और जब तक जीना होगा तब तक जंगल में भी आबाद रहेंगे। बोल, है कि नहीं ये बात?"

"सो तो है!" इस तर्क से पराजित होते हुए रूप ने कहा, "सब किस्मत का खेल है। लेकिन..."

"अभी लेकिन बाकी है भाई मेरे!" किशन ने टोका।

"हाँ उस्ताद! इसमें एक धुकधुकी-सी लगी रहती है, जाने कब खतरा आ जाए!"

किशनलाल ने कहा, "तुम भी यार! कैसी बातें करते हो! भगवान देने वाला है, वही लेने वाला है। आज वह देना चाहता है तो एक हज़ार को सौ हज़ार करता है। जिस दिन उसकी नज़र फिर जाएगी, वह सौ को सिमेटकर एक कर देगा, जैसे गिद्ध के पंख सिमट जाएँ तो वह भी बड़ा नहीं रहता। सोचकर देखो।"

"मुझे बाद में अपने पर कुछ झोंप-सी लगती है।"

"क्यों?"

"क्योंकि हम दूसरों को धोखा देते हैं।"

"धोखा कौन नहीं देता! मुनाफा क्या होता है? धोखा! व्यौपार में धोखा है और सारी दुनिया में व्यौपार है। तुम चक्की चलाके धर्म की कटौती करो। मेरे यार! बहुत क्या कहूँ? बछड़े का दूध छीनकर दूध पीते हो और कहते हो कि हम दूधाधारी हैं। यह तो भरम है मन का। जमा कैसे होती है दौलत? धोखे से।"

"तुम तो वह बात करते हो जो भले ही सच हो, मगर अच्छी नहीं लगती। न्याव और भाव भगवान के दरबार से आते हैं। तुम चोरी-चकोरी को ठीक कहते हो। जो किसी दिन पड़ गए पुलिस के चक्कर में..."

किशन ने काटा, "चक्कर में पड़े घनचक्कर! पुलिस इसलिए बनी ही नहीं कि है कि वह आपको किसी व्यापार में रोके। वह तो इसलिए बनी है कि 'राज' का हिस्सा 'राज' को

देते जाओ। जो खुले रोज़गार हैं, उनपर 'टैक्स' लगता है, जो छिपे हुए हैं, उन पर 'रिश्वत' खर्च होती है।"

"वाह, वाह!" रूप ने ठहाका लगाया, "उस्ताद, बलिहारी तेरी। चल तेरे लिए जान हाज़िर है। यों तू मुझसे महीने-दो महीने छोटा ही होगा..."

सामने से मास्टर केदारनाथ चले आ रहे थे। बूढ़े हो गए थे, रिटायर्ड थे, मगर अभी तक मसखरी की आदत नहीं गई थी। उनका नाम लड़कों ने कई दशाब्दियों पहले 'आलूबुखारा' रखा था। किरोड़ी खाती की 'पोदीने की चटनी' को लोग भूल गए, सुक्खी बराई की 'अजी नैक सुनते जाना' की बहार भी फीकी पड़ गई, मगर केदारनाथ का 'आलूबुखारा' अभी तक वैसा ही बरकरार था। खुद छेड़ते थे। सुन ही लिया आखिरी वाक्य। बोले, "बच्चा बिचारा!"

दोनों मित्रों ने मुस्कराकर कहा, "आलूबुखारा!"

मास्टर साहब बोले, "धत् तेरी की। अकल का मारा। अरे नाम ले किसी हलुआ-पूड़ी का। किस कूड़े-कजूरे का नाम ले लिया..."

वे चले गए, दोनों आगे बढ़ गए।

बस का अड्डा आ गया। बड़ा सुन्दर स्थान था। कुएँ बने थे दो, पक्की जगत के, जिन पर पेड़ों की छाया से एक सुन्दर जाल-सा तना रहता। एक न एक व्यक्ति वहाँ पड़ा ही रहता। दायें-बायें की धरमशालाओं के पेड़ों ने भी ठंडक कर रखी थी। परे ही कुछ पुराने ज़माने की खंडहर इमारतें पड़ी थीं। उनमें या तो बाबा लोग आकर ठहरते, या फिर कभी-कभी जुआ जमता। वहाँ की पुरानी जोगियों की और पीरों की कब्रों पर हिन्दू औरतें भी दीपक चढ़ातीं। मुसलमानियाँ चादर चढ़ातीं। सड़क के किनारे दुकानें बनी थीं। उनसे आगे चलकर ही नीम के पेड़ों की छाया में एक मैदान था जिसमें बसें खड़ी रहतीं और ड्राइवर दिखाई देते।

ड्राइवरों को अलग से पहचाना जा सकता था, क्योंकि या तो उनके चेहरों पर ज़रूरत से ज़्यादा लम्बी और ऐंठी हुई मूँछें उनकी सुर्ख आँखों के नीचे दिखाई देतीं, या उनकी त्यौरियाँ चढ़ी होतीं, और वे रुखाई से गालियाँ देते हुए बातें करते। वे पूँजीवाद और सामन्तवाद के विचित्र सम्मिश्रण थे। उनमें बगावत मशीन ने भरी थी, किन्तु उनके आदर्श पुराने थे। अजीब दृष्टिकोण था उनका। मुट्ठी भींचकर सिगरेट का कश खींचते और सबसे नाखुश रहते। पुलिस वालों की सामने खुशामद और पीछे से बुराई करते। वे ऐसे थे, उस गाँव की ज़िन्दगी में, जैसे गाँव के वैद्यों के हाथ में ऐलोपैथी की ईजाद—इंजेक्शन, जिसे बिना अधिकार के भी वैद्य लगाते थे और पैसा कमाते थे।

किशनलाल ने दो टिकिट ले लिए। हमेशा का दोस्त भी टिकिट बाँटते समय बाँटने वाले का दोस्त नहीं रहता था, क्योंकि गाँव का हर आदमी मोटर ड्राइवर से मुफ्त सवारी करने के लिए दोस्ती चाहता है। सो शंभू ने भी उनपर गौर नहीं किया।

दोनों बस की तरफ बढ़े।

उस समय मस्ता क्लीनर औरतों का सरका रहा था, “ए भैना, नैक सरक जा री...”

“जग्गा नहीं है...कह दियौ योंही...”

“अरी बहुत है, तू या घोंटूए तौ हटा...”

“तू बच्चा उठा ले री गोदी में...”

“ऐ तू सुनै कि नहीं...उतर जा गाड़ी ते...”

रूप और किशनलाल ने जाकर सलाम किया। आज बस से नायब सा’ब भी जा रहे थे।

रूप पान ले आया। किशनलाल ने सिगरेट पेश की। पास ही एक कम्युनिस्ट बनने वाले दुकानदार ने चाय की केटली आग पर धर दी कि शायद उसका भी नम्बर आ जाए, लेकिन जब कोई उधर नहीं मुड़ा और सब दूसरे समृद्ध चाय वाले के चले गए तो वह भूखा दुकानदार पूँजीवाद को गाली देने लगा। अभी गाँव में उसके साथ सलाम-दुआ करने वाले अन्य कॉमरेड पैदा नहीं हुए थे।

मोटर में औरतें पहले शिकायत करती रहीं कि गर्मी बहुत थी। मर्द और बच्चे पीछे बैठे थे। छोटे बच्चे रैं-रैं करते जनाने को गुँजा रहे थे। एक बनिया कपड़े की गाँठ पर हाथ धरे सपर-सपर करता चिल्ला रहा था। बस के एक छोर से दूसरे तक की भीड़ के शोर को पार करके दो आदमी किसी शादी के सम्बन्ध के बारे में ‘प्रायवेट’ बातें कर रहे थे, खूब गला फाड़कर—‘हम क्या किसी से कहते हैं, जो है न कि, जो है न कि...मिनकई...मिनकई’1 कि औरतों ने झटके से गाना शुरू कर दिया। रसिया क्लीनर ने पान दायें गाल से बायें के नीचे दबाया और नई सवारियों को बोरों की तरह भरकर कहने लगा, “अरी भागवान, सरक जा...” “कहाँ बैठें...” औरतें बोलीं...उधर पुरुष...“अब कहाँ सरका जावै...” तब क्लीनर ने रूप और किशन को भीतर धकेलते हुए कहा, “अरे ये खड़ी हैं बाहर, इन्हें बैठने दो...”

उसका मतलब सवारियों से था। किन्तु लोग हँस पड़े। वे ज़िन्दगी में मुसीबतें उठाने के आदी हैं। उनकी बातों में विद्रोह बहुत होता है, मगर सब कुछ चलता है। अब जो चलता है, वह रुकता नहीं।

क्लीनर ने हैंडिल लगाया।

“बोल बाबा भैरोनाथ की...”

“जय...”

घर्र घर्र घर्र...

भौं भौं भौं—भौंपू बजा...

क्लीनर दौड़कर पीछे की सीढ़ी से लटक गया और उसने दरवाज़े को अपने पीछे बन्द किया, जिस पर ‘फिर मिलेंगे!’ लिखा हुआ दीखा...और बस पेड़ों के पीछे आवाज़ बनकर

छिप गई, फिर औरतों का स्वर गीतमय बनकर उठा—“अरे हरी मोटर वारे मत तेज चलाए ऐसे...”

धूल के अजगर पीछे लौटकर फैलने लगे और बस गाँव से चल पड़ी।

उस समय शाम की छाया ढलान पर आ रही थी और आकाश में एक निस्तब्धता-सी छा रही थी।

रूप के आँगन में सोमोती ने गाय को सानी कर दी क्योंकि वह हार से लौट आई थी। आज उसको उल्टी-उल्टी ही आई थीं। वह समझ रही थी। छत पर जाकर देखा कि कोठे के सामने जावित्री बैठी आड़ में बाल काढ़ रही थी, सामने ऐना रखकर। जावित्री ने सोमोती को देखा तो उसे लगा कि वह निष्प्रभ हो गई थी। किसी-किसी में यह हीनत्व की भावना होती ही है। इसीलिए सामने आने पर वे चिढ़कर बातें करते हैं, किन्तु पीछे से उसी की मन ही मन प्रशंसा करते हैं।

“लालाजी तो गए।” सोमोती को सुनाकर जावित्री ने कहा, “तुम्हारे वे ले गए उन्हें।”

सब जानते थे कि रूप शहर सामान लेने जाता है तो साथ में किशन को भी ले जाता है। जावित्री का मन इससे भी कचोट खाता था, क्योंकि रामलाल और बिहारी इस पर टीका-टिप्पणी करते थे...

“वो तो काम से जाता है...”

“और क्या कोई सब बेकार घूमते हैं...”

“घर है, गिरस्ती है, पता नहीं, कब इसमें बड़प्पन आएगा। यह तो यों ही चल देता है...खैर, लड़कपन है, सब सम्भल जाएगा, जानता है, मैं घर पर हूँ ही...”

सोमोती ने कहा, “कुछ टूट-फूट गया होगा?”

“तो जेठ जी तुमसे भी कह नहीं गए?”

सोमोती ने कहा, “मर्द घर का मालिक ठहरा। हमें पूछके जाना है कि उसको!”

जावित्री ने आखें तरेरकर कहा, “मर्द पर कोई अंकुस नहीं।”

सोमोती ने कहा, “बहू!” यह उसके गौरव का प्रतीक था, जिसे सुनकर जावित्री मन ही मन जल उठती थी। वह कहती रही, “बाहर के काम में हम बोलें भी तो क्या?”

“हाँ, जिठानी जी!” उसने स्वर में व्यंग्य भरकर कहा—“पर तुम्हें देख मुझे सच अचरज होता है।”

“सो क्यों बहू?”

“यों कि वे गए तो हमारे घर में मानस तो हैं, पर तुम्हारे यहाँ कोई नहीं। चोर-चकोर हैं!”

“घर में मंगल सोएगा न?”

“मंगल तो फिर नौकर ठहरा। क्या भरोसा?”

“क्यों? वह तो उनके भरोसे का आदमी है।”

“पर लुगाई को तो क्या भरोसा! नीयत तो नीयत ही ठहरी। होसियार रहना!”

“सोमोती चिढ़ गई।” बोली, “आप ठीक तो किसकी हिम्मत बहू। गाँठ बाँध रखो।”

अँधेरा छाने लगा।

वह नीचे उतरी।

“कौन?”

बैल लाकर मंगल बाँध चुका था।

“में हूँ।”

“देर कर दी! भाभी! पर तुमने तो चूल्हा भी नहीं सुलगाया!”

“जी ठीक नहीं था। अभी करती हूँ।”

“भइया क्या सहर चले गए?”

“हाँ, ऐसा ही लगै।”

“हज़ार बार कह दी है, मगर मजाल है कि कह के गए हों।”

“वे मालिक ठहरे मंगल।”

“तो मैं कब कहता हूँ नहीं हैं,” मंगल ने विद्रोह के-से स्वर में कहा, “पर चिन्ता तो नहीं होती।”

“हाँ, ये तो है।”

“मुझे जाना था।”

“कहाँ?”

“एक मंडली आई है। बड़े ज़ोर का नाटक हो रहा है।”

“घर में कौन रहेगा? मैं इकली ही रह लूंगी।”

“रह लो तो क्या है? क्या डर है?”

वह भुनभुनाई धीरे-धीरे, “मरे! घी खाते बखत तुझे कुछ और बनी दिखूँ मैं! अब अपना काम पड़ा है तो लाला को फिकर ही नहीं है।”

वह बोला, “क्या बात है?”

“तू जा, तुझे मतलब?”

“कहो न!”

“तू जा! चुप रह!”

“अच्छा! तुम गुस्सा करती हो?” उसने कहा, “मैं जैसे काम ही नहीं करता। एक दिन नाटक क्या देखने की कह दी। मजूरों जैसा काम करता तो तुम्हारी भी तबीयत ठीक रहती!”

सोमोती को हँसी आ गई। फिर कहा, “तू जा। देख आ। बाहर ही सो रहिए, लौटकर। मैं तो द्वार बन्द कर लूंगी।”

“कर लेना।”

जब मंगल रोटी खाकर चला गया तो सोमोती ने एक रोटी खाई और द्वार बन्द करके लेट रही।

सोचने लगी, क्या फिर वह माँ बनने वाली है? हे भगवान! इस बार भी क्या पहले की तरह वह बेकार का बोझ ढोएगी? इससे तो जावित्री ही भली।

उसने छत पर जाकर देखा, मदन बैठा था, कोठे में लालटेन जल रही थी।

“लालाजी!”

“कौन? भाभी!”

“रोटी खा ली?”

“क्यों? कुछ काम है?”

“काम क्या है? कुछ नहीं। तुम तो लाला सीधे मुँह बतराते भी नहीं।”

अब देवर-भाभी के मज़ाक शुरू हुए। पर गाँव के मज़ाक भी और होते हैं।

“सो कैसे भाभी?”

“देखेंगे, तब कैसे बोलोगे।”

“कब?”

“जब द्यौरानीजी आवेंगी।”

“ऐसे ही बोलेंगे!”

“बहुत देखे ऐसे कहते। बड़े-बड़ों की बोली बदल गई।”

“रूप भइया की बदल गई है क्या?”

“उनको बीच में क्यों लाते हो हमारे-तुम्हारे?”

जावित्री ने व्यंग्य किया, “उन्हें तो बीच में ही रहने दो जिठानी जी!”

यह कह वह ऐसे हँसी जैसे साँपिन फुफकार उठी। मदन भी हँस पड़ा। सोमोती खिसिया गई। बोली, “बहू!”

उम्र में जावित्री एक साल बड़ी ही थी। यह अधिकार सोमोती ने ज़बरदस्ती ही ले लिया था, क्योंकि दो महीने बड़े होने के कारण ही रूप की स्त्री को किशनलाल ने भाभी बनाया था। इससे जावित्री को जो सबसे बड़ा नुकसान हुआ था, वह यह नहीं कि सोमोती किशनलाल से बातें कर लेती थी, वरन् हुआ था यह कि वह स्वयं अब रूप से बातें नहीं कर पाती थी। और सोमोती उस पर बड़प्पन जताती थी।

“हाँ जी!” जावित्री ने व्यंग्य किया।

“तुम मत बोलो हमारे बीच में!” सोमोती ने कहा, “लाला तो हार चुके थे।”

“भाभी से तो देवर हारैगा ही!” जावित्री ने कहा, “अनाड़ी जो ठहरा।”

मदन हो-हो करके हँसा। तभी रामलाल की खाँसी नीचे से सुनाई दी। सोमोती भीतर चली गई।

“भइया आ गए।” मदन ने धीरे से कहा।

"अरे मदन, आ गया!" आवाज सुनाई दी।

"आ गया!" मदन ने बुझे हुए स्वर से उत्तर दिया।

"कहाँ चले जाते हो भइया?" बिहारी ने उत्तर दिया, "इत्ती रात तक बाहर रहना क्या भले घर के आदमी का काम है!"

मदन झल्ला उठा। जावित्री ने फुसफुसाकर मदन से हँसते हुए कहा, "पूछो तो लाला! तुम इस बखत तक घर के बाहर क्यों हो?"

"कैसे पूछूँ?" मदन ने धीरे से कहा, "भइया का मुँहलगा है। ज़ोर से कहूँ तो घर की बदनामी होती है। यह दालभात का मूसलचन्द अच्छा आया। मन में आता है, साले के दो जूते दूँ। दिनभर भइया को बहकाया करता है।"

"मैं तो तुम्हारे मारे नहीं बोलती, इसे रोटी करके मैं ही खिलाऊँ। यह मुझे सड़क पै घूरै।"

"भइया से कहो न?"

"मुझे नहीं कहना किसी से। दीदे दिए हैं देने वाले ने। देख ले। मेरा क्या बिगड़े।"

"मैं तो इस साले को अंधेरे में किसी दिन मारूंगा।"

"क्यों?"

"जानती हो! कल भइया से कह रहा था—मैंने सुन लिया छिपकर—मदन का चलन ठीक नहीं है। ये दिन-रात किशनलाल की गैरहाज़िरी में भी भाभी के पास खड़ा रहता है, यह ठीक नहीं है। इसे तो कुछ धन्धा करा दो।"

"अरे राम!" वह बोली, "ऐसा पापी है यह?"

"क्या बताऊँ!" मदन ने कहा, "वह तो वह ज़मीन का मामला चल गया। किशन भइया ने कहा था कि मुझसे दबा रह। पार नहीं पाएगा।"

"तो सच है लाला, तुमने ही सरकारी कागज़ में बढ़ाया था।"

"अब गलती हो गई। होनी थी सो तो।" मदन ने कहा, "किशन भइया ने कहा था, मैंने लिख दिया।"

"उन्होंने क्या कहा?"

"कहते क्या?"

"मामला रफै-दफै हो गया?"

"रूप भैया ने करा दिया। किशन भइया ने गिरदावल को पचास रुपये दिए। उनका मुझपर अहसान है।"

"तुम कहाँ जाओगे?"

"नीचे।"

"हाय, मुझे ऊपरा इकली डर लगेगा।"

"वे तो शक करते हैं।"

"आग लगै, पानी से बुझै। इस घर में आके मेरे तो करम फूट गए। तुम डरते हो जो नीचे जाओगे?"

"नहीं जाऊँगा," उसने कहा।

"सच, मुझे उम्मीद न थी कि तुममें कुछ हिम्मत भी होगी।"

"यह न कहो भाभी! बड़ा कलेजा है मेरा।"

भाभी ने आश्चर्य से देखा। मदन प्रसन्न हो उठा। वह दूध ले आई। पीकर सो रहा।

बिहारी चला गया था। रामलाल के खर्राटे सुनाई देने लगे थे। वह अनमनी-सी खटिया पर पड़ी रही।

अब आकाश में तारे झलमाता रहे थे। मंडली जम रही थी। कभी-कभी नगाड़े की चोटें गूँजतीं और बुलन्द आवाज़ वाली कड़ियाँ थरथरातीं :

जो मैं कह दूँ, तुझसे चोर
तो तू क्या करैगा बोल...

फिर

हाय हुसन तूने लूट लिया
मेरा सारा जिया...

कड़मधुम, कड़मधुम...नगाड़े की चोटें...।

ऐ...ठहर जा! किधर जाता है! आज मैं कहता हूँ कि जिसने फरेब किया उसने ईमान का कलेजा चाक किया...।

वाह...वाह...

जियो...जियो...!

फिर पतले स्वर वाली बाँसुरी की तान...।

जावित्री ने उठकर पानी पिया।

मंगल जब लौटा तब सूका उग चुका था। आँखें भारी हो रही थीं। भोर की ठंडी हवा में खाट पर गिरते ही सो गया। कहीं मुर्गा बोला। फिर कुछ पक्षी चहचहा उठे। सोमोती अँधेरे ही दिशा-मैदान हो आई। लौटते में कुछ हरा काट लाई और उसने कहा, "मंगल! उठ! आज पसर चराने नहीं ले गया बैलों को! गोई लटा दी तैने!"

मंगल बड़ी मुश्किल से उठा और बैलों को खोजने लगा।

सोमोती भीतर आ गई और तब उसने पानी लाने के लिए घड़े उठा लिए।

दो

और बस रुक गई।

किशन और रूप उतर पड़े।

शहर आ गया था आगरा। वे रेल की बजाय इस रास्ते से ही आए। फतहपुर सीकरी पर गाड़ी बदली। यों तो सड़क बड़ी खराब थी और उधर बस नहीं चलती थी, किन्तु शादी की एक बस ने उन्हें उस सड़क पर भी पार करा दिया। और रोडवेज़ में जगह मिलना क्या कठिन था, उस सूने रास्ते पर भी पार करा दिया। और रोड़वेज़ में जगह मिलना क्या कठिन था, उस सूने रास्ते पर। अब वे किले के पास शहर में घुसे। बाहर जहाँ सब सुनसान रहता था, अब दुकानें बन गई थीं। भीड़, चहल-पहल और बिजली का हमला-सा हुआ भिखारियों वाले पुल के नीचे से गुज़रते ही।

"यार, भूख लग रही है।" रूप ने कहा।

अब वे दोनों मुड़ गए और पीपल मण्डी की तरफ मुड़े और छोटी लाइन की तरफ से रावतपाड़े के कोने पर पहुँचकर एक होटल में जा बैठे। कुछ पुरानी कुर्सियाँ और दो-तीन बेंचें पड़ी थीं। बिजली की रोशनी में एक मोटा आदमी बैठा था और तीन लड़के खाना परोस रहे थे।

गाँव का सुन्दर आदमी रूप यहाँ बहुत ही मामूली-सा दीखता था। वह गोरा था। सिर पर काली टोपी थी, आगे-पीछे नोकदार। उसकी मूँछें पतली-पतली थीं। चेहरा सुता-सा था, मगर आँखें अच्छी थीं। कंधे पर लाश अंगोछा धरे था। धोती भी टखनों तक थी। बालों में तेल पड़ा था। गले में गंडा था। यहाँ उसने हाथ में एक मोगरे का हार खरीदकर लपेट लिया था। कमीज़ हल्की नीली थी। और किशनलाल जो उसकी तुलना मे कम सुन्दर था इस जगह वह अधिक प्रभावशाली लगता था क्योंकि उसके मुख पर एक गाँभीर्य था और इस जगह पर वह अधिक प्रभावशाली लगता था क्योंकि उसके मुख पर एक गाँभीर्य था और सिर उसका नंगा था, माथे पर चन्दन लगा था, एक टीका-सा। वह मोटा-सा कुर्ता पहने था, जिसके भीतर से भी लाल बनियान चमक रही थी। उसके सिर पर कुछ मोटी चुटिया थी।

रोटियाँ लीं, उड़द की दाल ली, फिर खा-पीकर दोनों उठे और दूध में रबड़ी डलवाकर पी ली। चक्क होकर बीड़ियाँ सुलगाकर मुँह में पान दबाए दोनों सैर करने बाज़ार में निकल

पड़े। जब किनारी बाज़ार खत्म हो गया तब किशन चाँदी वालों की बाईं सड़क पर काश्मीरी बाज़ार की तरफ मुड़ गया।

"इधर कहाँ चल रहे हो?" रूप ने कहा।

"आ यार! किन चक्करों में पड़ा है!"

"कहाँ आखिर?"

"तू आ तो!"

काश्मीरी बाज़ार पीछे छूट गया।

किशन एक गली में मुड़ गया। रूप पीछे-पीछे चला।

किशन ने एक द्वार पर दस्तक दी।

"कौन है?"

"खोल! रैन बसेरा चाहिए।"

द्वार खुल गया। एक तीस साल की गेहुएँ रंग की औरत ने द्वार खोला। उसकी आँखें नशीली-सी थीं। हाथ में काली चूड़ियाँ थीं काँच की, जिसकी वजह से उसका रंग बहुत ही साफ दिखाई देता था।

"अये राजा, तुम हो?" उसने किशन को देखकर कहा, "बहुत दिनों में आए। ये कौन हैं तुम्हारे साथ?"

"हमारे दोस्त हैं।"

"बुला लो भीतर!"

रूप भीतर तो आ गया, किन्तु उसको भय ने घेर लिया। अब वह समझा कि वे एक वेश्या के घर आ गए थे। उसने धीरे से कहा, "किशन! यहाँ कहाँ?"

"मेरे साथ रहोगे तो दुनिया के हर रंग दिखाऊँगा।" उसने धीरे से कहा।

औरत का नाम था अनारो। लौटी तो शराब की बोतल लिए थी। देसी मसालेदार!

किशन ने कहा, "सिगरेट है?"

उसने पार्सिंगशो का पाकेट बढ़ा दिया।

रूप ने किशन की ओर आदरभरी दृष्टि से देखा।

किशन मुस्कराया।

प्रभात की पहली किरन जब फूटी तब जमुना किनारे की ठंडी हवा ने दोनों के मन को स्वस्थ कर दिया। दोनों चले जा रहे थे।

"क्यों यार! तुम तो इसे बहुत दिन से जानते हो?" रूप ने कहा।

किशन ने कहा, "नहीं, बाज़ारू औरत से दोस्ती नहीं रखनी चाहिए।"

"तो फिर?"

"मै तुझे ज़िन्दगी दिखाना चाहता था।"

“यार, तुझे देखकर मुझे बड़ा अचरज होता है।”

“सो क्यों?”

रूप ने प्रभावित होते हुए कहा, “वह यों कि इतना सब कुछ हो गया मगर तुझे कुछ पता ही न चला।”

किशन हल्के से हँसा। मन ही मन उसने कहा—तेरे पास चक्की है, दूकान है, ज़मीन है, मेरे पास कुछ नहीं। मेरे ऊपर कोई ज़िम्मेदारी नहीं, लेकिन मेरी कोई मिल्कियत भी नहीं।

ईर्ष्या से उसका मन रूप के विरुद्ध हो गया, परन्तु उसने अपने भाव को प्रकट नहीं होने दिया। कहा, “यार, तू अभी कुएं का मेंढक ही है।”

रूप और संकुचित हुआ। उसे अनुभव हुआ कि वह अपनी जवानी में ही गाँव का एक प्रतिष्ठित व्यक्ति था। किशनलाल की तुलना में अँग्रेज़ी भी पढ़ा था दसवें दर्जे तक। वह स्वयं सामाजिक अवस्था में उससे अधिक मान रखता था। किन्तु यहाँ उसका अस्तित्व जैसे बहुत छोटा था। किशनलाल की एक दुनिया और भी थी, जिस पर रूप का कोई अधिकार नहीं था। भले ही यह पाप की नगरी थी, किन्तु इसमें सुख था। गाँव में उसने किशनलाल को कभी खर्च करते नहीं देखा था। यहाँ वही हर बार खर्च कर रहा था। रूप को जब याद आया कि वह पहले भी इसके साथ आया था और वे घटनाएँ भी याद आईं तब उसके रोंगटे खड़े हो गए। परन्तु हर बार उन्होंने माल पाया था और रूप को किशनलाल ने भरपूर हिस्सा दिया था।

आगे एक अमराई थी।

रूप ने कहा, “पानी तो पीते चलें।”

किशनलाल ने धीरे से कहा, “नया इलाका है। क्या राय है?”

“कैसी?” रूप ने कुछ अविश्वस्त स्वर में पूछा।

“कोई नई मुर्गी फँसाई जाए?”

रूप का दिल हिल गया। पूछा, “यहाँ कौन है ऐसा?”

अपनी पैनी आँखों से कुएँ की जगत पर बैठे हुए एक व्यक्ति को देखते हुए किशन ने कहा, “जब दाता देता है तो छप्पर फाड़कर देता है। कहते हैं कि अंधा बाँटे रेवड़ी फिर-फिर अपने को देय—ऐसा एक आदमी रो रहा था। तभी दूसरे एक आदमी ने कहा—सूझते ही क्या फूट गईं जो आगे बढ़ नहीं लेय। समझे? ज़माना ऐसा ही है। पंचायत के पंच चुने जाते हैं। तभी न जब वे आगे आते हैं। आगे तो आप ही आना पड़ता है। जो अपने को गाबदी समझता है, वह गाबदी ही होता है। जो कुछ है, यहीं है, अभी है, अपने लिए है।”

रूप का मुँह कुछ खुल गया।

किशन ने कहा, “तू चल ज़रा आगे। इससे लोटा-डोर माँग—कहना, पंडित जी को चाहिए। ठाकुर लगता है। है इसमें तेल। बात करने का मौका आवे तो मेरी तरफ देखना।”

रूप ने बढ़कर कहा, “कौन लोग हो?”

"हूँ!" मूँछों वाले ने गर्व से कहा, "ठाकुर!"

"कौन ठाकुर?"

"पमार!" उसने और सिर उठाकर कहा। फिर बोला, "तुम क्या करोगे! बखत ही ऐसा है। सारे खाती बामन और सारे नाऊ ठाकुर हो गए।

किशन ने कहा, "नहीं भइया! पूछता था कि पंडितजी को पानी पिलाना है। यहाँ हम हैं परेदसी। बिना पूछे कैसे ले लेते।"

"पालागन!" ठाकुर ने किशनलाल की ओर देखकर कहा। पचास-एक साल का ठाकुर था। मूँछें तो काली थीं पर कनपटियों के बाल अब सफेद हो चले थे।

किशनलाल ने कहा, "खुश रहो ठाकुर सा'ब।"

और कहा, "पानी खींच ले नरायन।"

नरायन सुनते ही रूप चौकन्ना हो गया। ऐसा पहले भी हुआ था। वह एकदम समझ गया, किशनलाल अब इसपर कोई जादू करेगा, तभी तो उसने नाम छिपाया है।

"ठहरो!" ठाकुर ने कहा, "मैं लोटा-डोर देता हूँ। लोटा माँज दूँ।"

फिर उसने मिट्टी लोटे में डालते हुए कहा, "किस गाँव से आना हुआ?"

"कानपुर की तरफ के हैं।" किशनलाल ने उत्तर दिया। रूप ध्यान से सुनने लगा।

ठाकुर ने लोटा धोते हुए कहा, "इधर कैसे आना हुआ?"

"यात्रा पर निकले थे। जमुना जी के तीर बैठे, फिर सोचा बटेश्वर चलें।"

"बटेश्वर तो उल्टे हाथ को रह गया। लौटना पड़ेगा।" ठाकुर ने लोटा देते हुए कहा।

"हमारे लिए क्या लौटना!" किशनलाल ने कहा। उसके स्वर में लापरवाही थी। वह कहता गया, "जहाँ जाते हैं वहीं वही दिखता है।" फिर डाँटकर कहा, "नरायन! पानी लाया?"

किशन बैठ गया। ठाकुर प्रभावित हुआ। सीधे पूछने की हिम्मत नहीं पड़ी। कुएँ पर पानी खींचते रूप के पास जा खड़ा हुआ और धीरे से कहा, "पंडितजी तो बड़े मस्त हैं।"

"सिद्ध हैं सिद्ध!" रूप ने कहा, "मगर तुम कहना नहीं। हमसे आप नाराज़ होंगे। हम भी इसीलिए पीछे लगे डोलते हैं।

ठाकुर आतंकित-सा हो गया। बोला, "रहते कहाँ हैं?"

"तुम भी गाबदू हो!" रूप ने कहा, "सुना नहीं। विचरन करते हैं। साधू हैं। सट्टेबाज़ बहुत तंग करने लगे, क्योंकि इनके मुँह से निकली बात झूठी नहीं होती। तो इन्होंने यह भेस पहना कि कोई पहचाने नहीं। तुम तो जानो, कोई कमाई तो करनी नहीं है कि गेरुआ ही पहनते, मगर कमी इन्हें किसी की नहीं पड़ती।"

ठाकुर ने कहा, "तो आज मेरी कुटिया पै पधारो!" उसने हाथ जोड़ दिए। "वह दूर मेरी ही हवेली दीख रही है।"

"नहीं भाई!" रूप ने कहा, "सो तुम पूछो। मैं इतनी आफत मोल नहीं लेता। हवेली में ले जाओ तुम, डाँट खाऊँ मैं। फिर वहाँ तुम कुछ का कुछ कहोगे! तुम्हारे यहाँ भीड़-भब्बड़ होगा। महाराज एकान्तप्रिय हैं।"

"कौन है वहाँ। बस मैं, मेरी घर से, और है ही कौन अब! हारी होगा!" ठाकुर ने दयनीय स्वर से कहा, "सब छिन गई ज़मींदारी। अब क्या रहा है! थे, कभी हम भी थे!"

यह कहते-कहते दयनीयता और गौरव की सम्मिश्रित भावना उसकी आँखों में सुलग उठी।

"जाओ, जाओ!" रूप ने कहा। "क्यों खतरा मोल लेते हो ठाकुर सा'ब! महाराज प्रेतों से बातें करते है। लोग डरेंगे!"

ठाकुर तो गद्गद हो गया। बोला, "ऐसे ही सिद्ध के दरसनों की प्यास थी। पुरानों में पढ़ा-सुना था, देखा न था। हज़ार बेईमान घूमते हैं। उन्हें टिकने नहीं देता मैं। मगर एक बार कुछ देख लूँ तो भरोसा भी हो!"

रूप हँसा। बोला, "परीच्छा तो वो दे तुम्हें जिसे कुछ चाहना हो। वे चले जाएँगे या नहीं, पहले यह भी पता चले।"

ठाकुर ने डरते हुए कहा, "तुम कहो भइया!"

"तुम ही कहो!"

"मुझे डर लगता है, कहीं नाराज़ न हो जाएँ।"

"जैसे मुझे नहीं लगता! कल ज़रा नाराज़ हो गए थे तो पत्थर लेके खड़े हो गए कि जा साले भाग—मेरे संग मत चल। आज कहीं फिर बिगड़ गए तो?"

पानी का लोटा लेकर वह उतरा। किशन ने मुँह लगाकर पानी पिया और दूर फेंक दिया। ठाकुर चमक उठा। रूप ने दौड़कर उठाया और देखा। उसमें दौंचा पड़ गया था। ठाकुर से बोला, "लो, यह लो।" उसने पाँच का नोट अंटी से निकालकर हाथ बढ़ाया, "तुम कुछ फिकर न करो। दूसरा ले लेना। पर उनसे कुछ न कहना।"

ठाकुर देखता रहा। उसने रूप का हाथ पीछे हटा दिया और किशन के चरण पकड़कर बोला, "महाराज!"

किशन जैसे नींद से जगा। बोला, "कौन?"

"मैं हूँ हाकिमसिंह महाराज!"

"हवेली वाला हाकिमसिंह?"

"ही महाराज!" ठाकुर का मन हाथ से जाता रहा।

"क्या चाहते हो?" वही निर्लिप्त स्वर।

"कुछ नहीं महाराज!" अभी वह बात पूरी भी न कर पाया कि किशन ने काटकर कहा, "तो जाओ।"

"महाराज!" उसने दयनीय स्वर से कहा।

“क्यों ठहराना चाहता है हमें ठाकुर! जो भगवान ने दिया है उसमें सबर कर। इस संसार में तेरा कौन है?”

“कोई नहीं महाराज!” वह गिड़गिड़ा उठा।

“तो फिर तू खज़ाना क्यों चाहता है?”

“महाराज!!” वह पाँवों पर सिर रखकर पुकार उठा, “कुछ नहीं चाहता। बस, एक बार चरन रज से कुटिया को पवित्र कराना चाहता हूँ। शोभा हो जाएगी। खज़ाना खुल जाएगा।”

किशन ने नरायन को दिखाकर कहा, “इसको भगा दे। यह हमको कष्ट देता है!”

रूप ने हाथ जोड़ लिए।

किशन कहता रहा, “हम सिद्धि से ऊपर उठना चाहते हैं, यह हमें अपने संसारी लाभ के लिए नीचे खींचता है।”

रूप ने बीड़ी निकालकर बढ़ाते हुए कहा, “महाराज! बीड़ी पिएँ।”

“नहीं!” किशन ने हाथ की मुट्ठी खोल ऊपर उठाई। ठाकुर ने देखा, खाली हाथ था। बोला, “आ!” हाथ नीचे करते हुए उसने मुट्ठी भींच ली और जब हाथ खोला तब हाथ में बीड़ी थी। पूरी बाँह का कुर्ता था। किशन ऐसी हज़ारों हाथ की सफाइयाँ जानता था। यह गाता भी था। यह सब उसने लड़कपन में सीखा था। गाँव में एक धर्मोपदेशक आए थे। वे हार्मोनियम पर गाते थे। उन्होंने एक मंडली बनाई थी। पहले किशन ने ज़नाने पार्ट किए, फिर अभिमन्यु बनने लगा। एक जादूगर उसी मण्डली में आ मिला। समय के फेरे से मण्डली उजड़ गई। उपदेशक को आर्यसमाज सभा, आगरा ने नियत कर लिया और जादूगर एक वेश्या के पीछे मारा गया, लेकिन किशन ने कलाएँ सीख लीं। यह भाग रूप को भी ज्ञात नहीं था, क्योंकि उन दिनों वह मदरसे में पढ़ता था, गाँव से चार कोस हटकर। वह गाँव से आटा, घी ले जाता। वहीं रहता। उसका बाप माधोनरायन तब जीवित था और इज़्ज़तदार आदमी था। उसी ने दुकान खोली थी। चक्की ज़रूर लड़ाई के ज़माने में रूप ने लगाई थी। लोग बोले थे—“लौंडा है, तभी पंख फैला रहा है।” परन्तु वह पंख फैलाकर जब उड़ने लगा, तब लोगों ने कहा, “समर्थ है!”

ऐसी और जो घटनाएँ हुई थीं, उस समय भी किशन हाथ की सफाइयाँ दिखा चुका था। रूप ने जब उनका रहस्य पूछा था तो वह मुस्कराकर चुप रह गया था। आज भी अचानक बीड़ी के हाथ में प्रकट होने से वह विचलित हो गया।

किशनलाल ने कहा, “तू समझता है कि तू हमें देता है। वह है हमें देने वाला!”

“आहा हा हा!” ठाकुर ने विभोर स्वर में कहा, “क्या बात कही है। महाराज! आप तो सिद्ध ठहरे। पर हम गिरस्तों को भी यही कहा गया है :

जब दाँत न थे तब दूध दियौ।

जब दाँत दिए तो का अन्न न देगी!

अभी धरम है, अभी ब्राह्मण ब्राह्मन है।"

किशनलाल ने कहा, "ठाकुर! चल! हम वहीं चलेंगे। पुराने ठाकुर अभी वहीं हैं।"

"महाराज, वे तो स्वरगवासी हुए।"

"मूर्ख!" किशन ने कहा, "अभी उनकी आत्मा वहीं दु:ख भोग रही है। तभी तो तू दुखी है।"

"बड़ा दुखी हूँ महाराज!"

किशनलाल उठ खड़ा हुआ। वह ऐसे चला जाता था, जैसे संसार से विरक्त था। उसके लिए कहीं कुछ नहीं था। ठाकुर ने गर्व से रूपनारायण की ओर देखा। रूप ने हाथ उठाकर आकाश की ओर दिखाए।

"आओ पंडित!" ठाकुर फुसफुसाया।

दोनों चल पड़े। ठाकुर बढ़कर आगे आ गया, उसकी चाल में भी श्रद्धा थी।

हवेली गाँव के छोर पर थी। ठाकुर सुनसान मार्ग से लाया, ताकि किसी की सिद्ध पर दृष्टि न पड़ जाए। उसे विश्वास हो चुका था कि पुरखों ने खज़ाना गाड़ छोड़ा था। फिर अगर उसका पता भी चल गया तो खोदना क्या आसान था! मान लो, पुरानी अशर्फियाँ निकलीं तो गलेंगी कैसे? सुनार से कहना तो ठीक नहीं होगा। अगर हीरे-मोती निकले तो! साफ पता चलेगा कि यह हीरे नये नहीं, पुराने हैं, क्योंकि हीरों की कटान बदल गई है। अच्छा हो कि गढ़े-गढ़ाए गहने निकलें। लेकिन जिन्होंने गाड़ा होगा, उन्होंने गहना गढ़वाकर थोड़े ही गाड़ा होगा। बहरहाल, कैसा भी हो। एक बार निकले तो सही। फिर की फिर देखी जाएगी। ठाकुर ने किशनलाल और रूप को भीतर के आँगन में ले जाकर ख़ाट डाली और सोचा—यह ठीक है। यहाँ से सिद्ध महाराज एकाएक चले तो जा न सकेंगे, न बाहर के लोगों को पता ही चलेगा।

किशनलाल ने परिस्थिति समझ ली कि भीतरी आँगन से निकलना सरल नहीं होगा। उसने ख़ाट पर लेटकर कहा, "ठाकुर! बस जा! अब कोई न आवे हमारे पास। नरायन को भी हटा दे!"

ठाकुर पीछे हटा और रूप से बोला, "पंडित! अब?"

"अब," रूप ने कहा, "रोटी रख दो सिरहाने। घी मत लगाना। और कुछ नहीं। बस पानी रखना। महाराज और कुछ खाते नहीं।" फिर कहा, "और स्त्री पास न आए किसी भी हालत में। महरिया की छाया पाँच-पाँच हाथ तक न पड़े।"

किशनलाल ने भी सुना और मन ही मन प्रसन्न हुआ। वह समझ रहा था कि यहाँ से निकलना कठिन होगा, लेकिन रूप ने रास्ता खोल दिया था।

किशन एकान्त में रह गया। उसे नींद आ गई। दुपहर ढल चली। ठाकुर ने आकर जगाना चाहा, पर रूप ने इशारा किया, "ऐसा न करना।" दोनों बाहर जा बैठे।

ठाकुर ने कहा, "कब तक जागेंगे?"

"इनका क्या ठिकाना। सात दिन से तो मैं इनके साथ हूँ। सोते ही न देखा।"

"अच्छा! सोए ही नहीं?"

"सारी रात बैठे रहना, जैसे किसी से बातें कर रहे हों!"

"किससे?" वह डरा।

"जाने किससे! आत्माएँ होंगी।"

तभी आवाज़ आई, "हाकिमसिंह!"

"महाराज!" दौड़कर वह भीतर गया।

किशन उठ बैठा। "कहां ले आया हमें। खाना नहीं, पीना नहीं तेरा बाप भूख-प्यासा है। और साँप बनकर यहीं डोलता है। उसे गंगा पहुँचा दे।" और आवाज़ दी, "नरायन!"

"महाराज!" रूप ने हाथ जोड़कर कहा।

"चल! ठाकुर के बसेरा ले लिया।" वह आगे बढ़ा। ठाकुर ने पाँव थामकर कहा, "महाराज! मर जाऊँगा! यहीं ठहरें। कुछ नहीं सूझता। जवान बेटा पलटन में था, मारा गया।"

उसकी आँखें भर आईं।

किशन ने कहा, "और तूने पाप नहीं किया?"

"हम संसारी हैं!" ठाकुर ने गिड़गिड़ाकर कहा, "पाप कौन नहीं करता! हमें क्षमा करें महाराज।"

"अच्छा, चल!" किशन ने बढ़ते हुए कहा।

रूप बढ़ने लगा।

किशन ने तमककर कहा, "तू कहाँ चला! बैठ जा यहीं! ठाकुर, चल! हम तुझे रामबूटी देंगे। यहाँ नहीं रहेंगे।"

रूप ने विवश होकर देखा ठाकुर की ओर। किशन ने ज़ोर से कहा, "खबरदार, जो हिला।" हाथ उठाकर एक बार पंजा खोलकर मुट्ठी बाँधी। रूप वहीं गिर गया। ठाकुर की जीभ डर के कारण तालू से सट गई।

जब किशन और ठाकुर चले गए तब रूप पड़ा-पड़ा कराहा, "अरे सिद्ध का मारा हूँ। कोई पानी तो पिला दो!"

दीवार के पीछे चूड़ियों की झनकार सुनाई दी।

"अरे पिला दो पानी! देही निचुड़ी जाती है!"

एक स्त्री गिलास में पानी ले आई। अधमिची आँखों से पड़ा रूप कराहता रहा। स्त्री ने उसे सहारा दिया। वह उठा और फिर गिर पड़ा। स्त्री ने फिर उठाया और अपने कंधे से उसे टिकाकर पानी पिलाया। रूप ने आँखे खोलीं और बैठ गया। बोला, "धन्न परमेसुरी। तैने बचाया। आग-सी फुक गई रोम-रोम में।"

स्त्री के माथे तक घूँघट था। रूप ने देखा। स्त्री के हाथ सुडौल थे। कुछ गौरी भी थी। समझ गया, युवती थी।

स्त्री आतंकित थी। बोली, “अब तो जी ठिकाने है?”

“हाँ।” रूप ने कहा, “तुम कौन हो! मानुस हो कि आत्मा हो?”

“मैं!” वह मुस्कराई, “आत्मा!”

छिटककर रूप हट गया और भयभीत-सा लेट गया और चिल्लाया, “अरे बचइयो भैया! ठाकुर!”

स्त्री हँसी। बोली, “चिल्लाते हो मरद होकर, ऐसे डरते हो!” वह पास आकर हाथ पकड़कर उठाते हुए कह उठी “उठो! मैं भी आदमिन हूँ। सिद्ध बड़े पहुँचे हुए लगते हैं।”

रूप बैठा। उसने उसके हाथ पर हाथ फेरा। सिर छुआ और कहा, “हो तो मानुस ही।”

फिर बीड़ी सुलगाई। कहा, “तुम कौन हो?”

“इस गढ़ी के मालिक की घरवाली।”

“ठकुरानी हो?”

स्त्री की नाक का बुल्लाक हिल उठा। उसके ऊपरी होंठ पर बहुत हल्के मुलायम रेशे थे, जिससे लगता था कि किसी लड़के की मसें भींग आई हों। इस समय उसका मुँह खुल गया था। रूप को लगा कि वह स्त्री चंचला थी।”

पूछा, “ठाकुर के कितने बच्चे हैं?”

“एक भी नहीं!” पर यह कहते हुए उसके मुख पर उदासी नहीं छाई।

“ठाकुर तो उमरदार हैं। तुम बाद में आई हो, क्योंकि वे तो एक जवान लड़के की मौत की बात कहते थे।”

स्त्री ने कहा, “वह उनकी पहली से था।”

“तुम कौन गाँव की हो?”

बोली, “जरास की।”

“किसके घर की?” रूप ने बिना जाने ही पूछा।

“स्त्री कुछ सकपका गई। रूप को शक हुआ। बोला, “वहाँ अपना आना-जाना रहता है। किसकी बेटी हो? किस ठाकुर की?”

स्त्री ने कहा, “कायमसिंह ठाकुर थे...”

स्त्री कहते हुए हिचकिचा गई। वह उठ खड़ी हुई और बोली, “तुम यहीं ठहरो। हारी आता होगा।”

वह भीतर चली गई।

शाम हो गई, अँधेरा छा गया। न ठाकुर आया, न किशन। दो बैल आ गए। हारी आ गया। रूप बाहर के छप्पर में आकर पड़ा रहा।

हारी ने चिलम सुलगाई और कहा, “कहो भइया! ठाकुर के आए? जरास से?”

वह तनिक मुस्कराया जो दीपक के उजाले में रूप की आँखों से छिपा नहीं रहा।

तीन

उस समय सोमोती खाट पर लेटी सोच रही थी। अबकी बार देर लग गई। पर ऐसा पहले भी हो चुका था। कभी-कभी पुर्ज़ों को ढलवाने के लिए भी आगरे में रुक जाना पड़ता था। वह जानती थी कि मिस्त्री लोगों पर कोई रोक नहीं थी। वे चाहे जैसे दाम वसूल करते थे। एक के दो तो खास मालिक से। एक के चार कर देते थे ड्राइवर। वह झुँझला उठी। दूकानदार कौन भले थे। वे भी ऐसे ही लूटते थे। वह इस बात पर मन ही मन गर्व करती थी कि उसके यहाँ पिसा-पिसाया असली गेहूँ का आटा आता था। चक्की पर काम करता था स्वयं उसका पति। बगल में दुकान थी। हाथ बँटाने को रखा हुआ था एक लड़का हरचरन। माली का था, मगर था होशियार। बड़े होने पर काम का आदमी होगा, ऐसा रूपनरायन का मत था। वह दिन-भर काम करता, शाम को चला जाता। घर से उसका ताल्लुक नहीं था। घर आता था मंगल।

तभी उसके सिर में कुछ भारी-भारीपन-सा छाने लगा। वह पड़ी रही। फिर उसे लगा कि उसे प्यास लग रही थी। वह उठी। उसने पानी पिया। आँगन के कोने में एक ओर भैंस खड़ी थी। गाय बैठ गई थी। लबारे अन्य भाग में बँधे थे। भैंस का मुँह अब भी चल रहा था। दोनों बैल शायद सो रहे थे। बाहर ओसारे के छप्पर में सोया मंगल। वह फिर खाट पर आकर लेट गई। उसे लगा, कोई कहीं धीरे-धीरे फुसफुसाकर बातें कर रहा था। कौतूहल जागा। चुपचाप कोठे पर चढ़ी। मदन और जावित्री होंगे! मन सन्न रह गया। आवाज़ें फुसफुसा रही थीं।

सुना।

“अब मुझे जाने दो भाभी!”

“क्यों, अभी तो जेठजी सो रहे होंगे।”

“सोता देख तो आया ही था। काफी देर हुई। कहीं जागे तो कहेंगे, ऊपर क्यों गया था!”

“तुम पर शक करते हैं?”

“वे नहीं करते। बिहारी कराता है।”

“मुझे अकेले डर लगता है! तुम्हारे भइया जाने कब आएँगे।”

फिर आवाज़ें बन्द हो गईं। कोई हल्के पैरों से हट गया।

सोमोती निश्चित नहीं कर सकी कि क्या था? पर उसे अपने पति पर भी झुँझलाहट आने लगी।

बाप के घर कैसी मस्त रहती थी। पर यहीं उसे क्या बंधन था? वह मालकिन थी। शादी के पीछे सन्तान भी हुई, बचती नहीं।

स्त्री का हृदय तब अपनी सन्तानों के बारे में हुई घटनाओं का चिन्तन करने लगा। फिर वह सो गई।

सबेरे उठी तो पानी का घड़ा भर लाई। रख रही थी कि जावित्री छत पर दीखी।

"सोई नहीं?" सोमोती ने कहा।

वह चौंकी, "क्यों?"

"आँखों में जगार-सी लगी। लाला आ गए?" उसने व्यंग्य किया।

"कोई न आया।" जावित्री ने खीझकर कहा, "रात मच्छरों ने न सोने दिया।"

"हमारे आ जाया करो रात।" सोमोती ने कहा, "यहाँ एक भी नहीं है।" वह हँस दी। परन्तु जावित्री हतप्रभ हो गई, बोली, "तुम्हारे यहाँ तो सामने ही गोबर है। तुम्हें टेव पड़ गई है।"

अपने वैभव पर व्यंग्य सोमोती को अखर गया। फिर वह यह भी जावित्री को प्रकट करना चाहती थी कि उसने रात की मदन वाली फुसफुसाहट सुनी है। बोली, "मुझे तो रात डर लगता है।"

जावित्री के मुँह पर रंग आया, पर वह चला गया। बोली—"अकेली रहती हो न।"

"तुम भी इकली रहती हो! तुम्हें नहीं लगता?"

"सब लोग सामने नीचे ही तो सोते हैं।"

सोमोती ने देखा। प्रतिद्वन्द्वी हल्का नहीं था। वह जिधर से पकड़ती थी, उधर ही से जावित्री पर से हाथ फिसल जाता था, जैसे उसके सारे शरीर पर तेल लगा हुआ था। वह मन ही मन चिढ़ गई। उसकी समझ में ही नहीं आया कि कैसे कहे। बहुत भौंड़े तरीके से बोली, "रात कौन आई थी तुम्हारे यहाँ?"

"कोई नहीं"

यह वार भी निष्फल गया। वह चुप हो गई, पर मन में उसके घृणा भर आई। पर वह घृणा भी व्यक्त नहीं थी, कुछ उलझन-सी थी। कहा, "लाला आएं तो भेजना।"

"कौन, मदन लाला!"

"हाँ।"

"क्यों? कोई बात हो गई?"

"हाँ, अबके मेला लगेगा, मैं तो न जा पाऊँगी, वे मेरे लिए कुछ चुटीले ले आएँगे। तुम्हारे जेठ से कहती हूँ तो कह देते हैं, और लुगाइयों के संग जा के ले आ, या मंगल या

मदन से मँगा ले।"

"मेला परसों है। तुम नहीं चलोगी?"

"मेरा जी ठीक नहीं है। मैं तो सोच रही हूँ कि आदमी अतरौला भेज दूँ।"

"क्यों? ननद बुलाओगी?"

"हाँ। पहले इतनी जल्दी तबियत नहीं बिगड़ती थी। अब तो भारी चीज़ नहीं उठती। रोटी सेंकती हूँ तो सिर में आधा सीसी-सी हो जाती हैं। जो करता है, बाँध के पड़ी रहूँ।"

वह गर्भवती थी। इस कल्पना से ही जावित्री का रोम-रोम जल उठा। कितने भाग्य की थी यह स्त्री। और वह स्वयं! बोली, "किसे भेजोगी?"

"मंगल चला जाएगा।"

"ठीक है। मेले में तो मैं भी जाऊँगी नहीं।"

"क्यों?" वह चौंकी।

"मैं और चम्पो नाइन एक साधू महाराज के दरसन को जाएँगी, और भी जाएँगी। बड़े सिद्ध हैं।"

"भगवान तुम्हारी गोद भरे!" सोमोती ने व्यंग्य का मज़ा लेते हुए कहा।

जावित्री रुआँसी हो गई। बोली, "क्या करूँ जिठानी जी! बहू की कदर तब, जब वह लाल खिलाए, वर्ना सब बाँझ समझ के मुँह फेर लें। सारा दोस औरत का माना जावै, मरद का नहीं, भाग्य तो दोनों का संग चलै। तुम बोझ-ओझ न उठाया करो आजकल। भगवान देता है तो सिर झुका के लेना ही ठीक है।"

इस व्यंग्य, प्रशंसा, सहानुभूति के विचित्र मिश्रण से सोमोती का मन भीतर ही भीतर रुक-सा गया। फिर सम्भलकर बोली, "दोस कौन देता है? बड़े लाला?"

उनका मतलब किशनलाला से था।

"नहीं। वे तो नहीं कहते, पर जेठजी तो कहते ही हैं। उनके मिलने वाले कहते हैं।"

"बड़ों की तो आदत होती है बहू! कि घर में बच्चा खेलै। मेरे तो बचते नहीं।"

"तो तुम भी चलो न साधू महाराज के यहाँ! मेरी तो ये ही कहनी है।"

सोमोती सोचने लगी। फिर बोली, "वे तो हैं नहीं, फिर किससे पूछ के जाऊँ? तुम्हारी जेठजी से बात न हो, तो बड़े लाला नहीं तो, छोटे लाला तो हैं।"

अब सोमोती कह गई। पर जावित्री उस व्यंग्य को समझी नहीं। बोली, "बस, एक लाला का सहारा है।"

वह इतनी स्वाभाविकता और सहज रूप से यह बात कह गई कि सोमोती को मन ही मन अपने ऊपर लाज-सी हो आई। बोली, "तुम जाओ, हो आओ। देखो तो पहले। फिर मैं भी देख आऊँगी। तब तक वे भी आ जाएँगे। अभी तो मैं मंगल को भेजती हूँ। और वह भरोसे का तो है, पर जानै नन्दजी उसके संग आवैं कि नहीं!"

जावित्री ने कहा, "न हो छोटे लाला को भेज दो। वे बचपन से जानैं।"

हाँ यही ठीक है।" सोमोती ने कृतज्ञता से कहा, "तुम कह देना, चले जाएँ!"

"तुम कह दोगी, तब भी चले जाएँगे वे। सच! सुभाव बहुत अच्छा पाया है। मोम है। जो चाहे जैसा गढ़ ले।"

दुपहर हो गई। सोमोती का मन और थका-थका-सा था। जावित्री का भेजा मदन आ गया। सोमोती ने बिठाया।

"आओ लाला", सोमोती ने कहा, "बड़े लाला जी और तुम्हारे भैया तो सहर गए हैं। मेरी तबीयत ठीक नहीं है। तुम ले आओगे नन्दजी को?"

"अतरौला जाना है?" मदन ने पूछा।

"जाना तो है," सोमोती ने कहा, "नन्दोईजी पूछेंगे, तो कह देना।"

"कह दूँगा, तुम अकेली हो।"

"यों कहोगे? पड़ोसी नहीं है क्या? बहू के लिए यह तो ठीक नहीं होगा। यों कहना—तुम्हें देखे भी बहुत दिन हो गए। तबियत खराब है उसकी। तुम्हें देखने को भी जी चाहता है। तुम्हारे भैया ने कहा है, हो सके तो एक बेर जीजाजी भी होते आएँ।"

मदन तैयार हो गया।

चलने को हुआ तो जावित्री ने कहा, "जा तो रहे हो मगर याद रखना कि शिवलाल कंजूस है।"

"तो मेरा क्या कर लेगा?"

"करैगा काहे को। तुम तो उलटे कुछ दे के ही आओगे। मगर चमेली को जानते हो?"

"क्यों नहीं जानता। बचपन से देखा है।"

"वह देखना और बात है।"

मदन चौंका। सफेद कमीज़ पहने था। सफेद धोती, जिसकी लाँग का एक छोर तिकोने झंडे-सा नीचे तक लटका था। बदन पर बास्कट थी। रेशमी रूमाल गले में बँधा था। पाँवों में काले मुँडा बूट थे, जिनके फीते चौड़े थे। घुटनों तक के रंगीन मोज़े पहने था। सिर पर तिरछी टोपी थी। आँखों में काजल था। गोरा रंग था, मूँछें हल्की थीं। सीना मुलायम-सा उभरा हुआ था। आँखों में रस था। छबीला जवान था।

"तो फिर?" उसने पूछा।

"लाला! ऐसा कुछ मत करना जो नन्दोईजी को तुम पर शक हो जाए।"

उस समय मदन को अपने रूप में कमी लग रही थी। वह पान खाकर होंठों पर पीक रचाना चाहता था।

"चमेली कुछ ठीक नहीं है।" जावित्री ने कहा।

मदन ने कहा, "तुमको तो सबमें बुराई सूझती है।"

"क्यों?" जावित्री ने तिनककर कहा, "मैंने और किसकी बुराई कर दी जो मुझसे यों कहते हो?"

मदन ने बीड़ी सुलगाई और चल पड़ा। पान खाया अड्डे पर। बस आ गई। दो घंटे का ही सफर था।

अतरौला छोटा-सा गाँव था। उसमें पेड़ भी कम थे। हरियाली नहीं के बराबर थी। कुछ घर थे, कच्चे-पक्के। खेत बिल्कुल गाँव में थे, या कहना ठीक होगा कि गाँव खेतों में बसा था। उपले थपे थे, बिटौरे लगे थे और काँटों की बाड़-सी बनी थी। कुत्ते सो रहे थे। पीपल के पेड़ के नीचे देवी का थान था। उसके पास ही छोटा-सा प्राइमरी स्कूल था, जो आज़ादी के बाद खुला था। एक पक्का कुआँ था, जो सारे गाँव की जान था। यों इधर-उधर कुइयाएं भी थीं, पर जीवन था कुएँ पर। मदन भीतर घुसा। बहुत छोटा-सा बाज़ार था। उसे यह जानने में देर न लगी कि शिवलाल कहाँ रहता था। शिवलाल का मकान आगे से पक्का था, पर नौहरा बगल में कच्चा था। एक ओर एक पक्की दीवार ढहा गई थी, शायद मेह में, जो उसकी गरीबी की गवाही दे रही थी। शिवलाल आजकल बेकार था। पहले सायर था। अब वह विभाग बन्द हो चुका था। बाकी लोग इधर-उधर नौकरी में लगा दिए गए थे, मगर यह केवल चौथा दर्जा पास था अतः उस वक्त के खाए मलीदे किसी तरह काम नहीं आए और अब वह बहुत ही तंग था। सिर पर जवान बहन थी प्रेमवती, परन्तु सारा गाँव उसे प्रैम कहता था।

चमेली बड़े प्रेम और उछाह से मिली। गाँव में क्वाँरी हो, ब्याहता हो—गाँव की लड़की पर्दा नहीं करती, और वह भी भैया की ससुराल से आए आदमी के सामने तो प्रैम काहे को आड़ करती। उसने मदन को खूब छेड़ा। मदन ने भी जवाब दिया। परन्तु जब चमेली को ले चलने की बात आई, शिवलाल ने कहा, "मैं तो बीकानेर जा रहा हूँ। एक नौकरी की इन्टरव्यू है। घर में अकेली प्रैम को कहाँ छोड़ जाऊँ? इसलिए कहना, इस वक्त लाचारी थी। फिर भेज दूँगा।"

शिवलाल पतलून पहनता था, कमीज़ भीतर डालता था। देखकर वह चौदहवीं जमात पास लगता था। चमेली को उसके व्यक्तित्व पर गर्व था, यद्यपि उसके दारिद्र्य के कारण वह सदैव उससे चिढ़ी रहती थी।

जब मदन लौट चला तो रास्ते में शिवलाल से मोटर के अड्डे तक पहुँचाते समय बातचीत हुई।

"आप क्या काम करते हैं?"

"खेती है। और मैं व्यौपार करने की भी सोच रहा हूँ।"

शिवलाल की आँखें अचानक विचारमग्न हो गईं। बोला, "बाल-बच्चे हैं?"

"अभी ब्याह ही नहीं हुआ।" मदन हँसा।

"कहीं बात चली है?"

"अभी नहीं।"

"मैंने आपके भाई साब किशनलाल जी को तो खूब देखा है। उनसे मेरा नमस्ते कहिएगा।"

"जरूर।"

मोटर आई। चार किसान चढ़े, फिर मदनलाल। बस के जाने पर शिवलाल घर पहुँचा।

प्रैम कुएँ पर गई थी। चमेली आटा गूँध रही थी। शिवलाल ने कहा, "तुमने कहा ही नहीं।"

"क्या?" उसने आटे सने हाथों से साड़ी का पल्ला सिर पर खींचते हुए कहा।

"यह लड़का अभी अकेला है।"

"अकेला क्यों है, इसके भाई हैं, भाभी हैं...सब हैं, ज़मीन-जायदाद...।"

"अकेला तो है ही, इसका रिश्ता नहीं हुआ!"

"हाँ, सो तो है।"

"अपनी प्रैम के लिए कैसा रहेगा?"

"बहुत ज़ोरदार जोड़ी रहेगी। मगर होगा कैसे?"

उसकी बात सुनकर शिवलाल नीचे देखने लगा। वह कहती रही, "बामन है! बामन! कोई बिना रुपये बात करता है! पूछ देखो, मुँह फाड़ेंगे।"

उसके गले से पसीना टपका तो उसने आटे को जल्दी-जल्दी गूँधा, जैसे उस तरीके को अपनाने से पसीना उड़ गया।

शिवलाल कुछ कहे, दूर से प्रैम दिखाई दी। वह हट गया। पर उसका मन मदन का रूप ही पी रहा था। अच्छा लड़का था। खानदान भी चोखा था।

और मदन जब अपने बरौठा पहुँचा तो सोमोती की आशाएँ ही रुँद गईं। क्या कमी की थी आज तक जो यह हुआ। नन्द के नाते उसने क्या नहीं किया और बहन के नाते रूपनरायन ने कितना उसपर खर्च नहीं किया, मगर लड़के-वाले हैं, ठसक ही तो दिखा दो।

वह एकान्त में रोई। लेकिन बात शिवलाल की ठीक ही थी। बेकार था। नौकरी सबसे ऊपर। उसे तो जाना ही था बीकानेर। ऐसे में जाता भी कैसे? पहले माँ थी, अब नहीं रही। अब वह अनब्याही बहन को छोड़ता भी कहाँ? आखिर वह रहती भी किसके पास?

जावित्री ने छत पर से पूछा, "नहीं भेजा?"

वह मदन से सब कुछ सुन चुकी थी, लेकिन उसे मज़ा लेना था।

सोमोती मन ही मन चिढ़ी। बोली, "उसके घर में मौका ही ऐसा था।"

"तुमने नन्द को बुलाया, नन्द की नन्द को भी बुलवा भेजतीं।"

सोमोती को उत्तर नहीं सूझा। बोली, "सो कैसे होता बहू?"

"तो हम क्या मर गए थे?" जावित्री ने अधिकार जताया, "हम तो कुछ कह सकते नहीं। तुम बड़ी ठहरीं, उमर में तो कम होगी, पर नाता ही सही, हम क्या बोलें?"

सोमोती का मन छोटा हो गया। उसके बड़प्पन की ढोल की पोल प्रगट हो गई।

उसे रूपनरायन पर क्रोध आया, जो चला गया था। वह हमेशा ही जाता था। पर चार दिन हो गए थे। ऐसा वह किसमें व्यस्त था?

चार

और सचमुच चार दिन होते तो काफी हैं, मगर रूपनरायन ने गँवाए नहीं थे। शाम हो चली थी। वह बैठा था।

नीली जना की लहरें, लाल आकाश और धरती के अनेक रंग और सामने जलती आग की चोटी के सुनहले रंग के नीचे गर्भ तक उतरते-उतरते अनेक रंगों की मिलावट की चकमक, झिलमिल। भस्म और काठ उस आग के नीचे आदि और अन्त के प्रकारान्तर से दिखाई पड़ते।

“ठाकुर, देख!”

“हाँ महाराज!”

“यह आग दोनों को चाटती है, काठ को भी, राख को भी! चाटती है न?”

”हाँ महाराज!”

“पर राख का कुछ नहीं होता, क्योंकि वह जल चुकी है। ऐसे ही जो साधू अपनी वासना जला चुका है उसका कुछ भी नहीं बिगड़ता। ऐसे ही ऋषि-मुनि भी अपनी कामना जला देते थे।”

“आप किस रिषी-मुनी से कम हैं देवता!”

किशनलाल मुस्कराया। कहा, “ठाकुर! तू श्रद्धा रखता है। नरायन!”

रूप ने काँपते स्वर से कहा, “महाराज!” जैसे उसपर आतंक छाया हुआ था।

“अब तो नहीं करेगा?”

“नहीं महाराज!”

“ठाकुर! इसे तीन दिन बन्द रखा तुमने! कोई और तो नहीं मिला इससे?”

“नहीं महाराज, बस घरवाली इसे रोटी-पानी पहुँचाती थी। और मैं तो आपकी सेवा में यहीं था।”

“पूछो इससे! अब करेगा यह?”

“छोड़ दें महाराज!” ठाकुर हाकिमसिंह ने कहा। आज वह कुछ अलग-सा लग रहा था। चार रोज़ से महाराज की सेवा में वह मूँछों को कालिख लगाकर अपनी जवानी का

पर्दा नहीं खींच पाया था, सो बुढ़ापे की रेखाएँ बनकर सफेद बाल उसकी मूँछों में से झाँक रहे थे।

वह स्वयं नरायन का अपराध नहीं जानता था।

"अच्छा ठाकुर! तू कहता है तो जाने दे।" किशनलाल ने धूनी में लकड़ियाँ डालते हुए कहा, "सर्वेस्वरी! और खा। सबको खा ले। ठाकुर!"

ठाकुर कुछ डर गया।

बोला, "महाराज!!"

उसका स्वर कुछ घबराया हुआ था।

"जा!" किशनलाल ने कहा, "चामड़ के पास आज रात सो रह। रात को बेताल आएगा तुझे जगाने। उससे कहना कि वह तुझे तेरे बाप के प्रेत से मिला दे और दफीना दिखा दे। वह तुझे दो-एक प्रेत दे देगा। और..."

ठाकुर को कंपकंपी आ गई। वह सेना का वीर था, पर शिवजी के गणों से ज़रा घबराता था। महाराज ने तो पूरी बरात खड़ी कर दी। बोला, "दया हो महाराज की!"

"क्यो?" किशनलाल ने कड़ककर कहा, "डरता है! उस अपने बाप से मिलने से डरता है जो साँप बना डोल रहा है। खज़ाना लेगा मगर..."

"महाराज!" ठाकुर ने आँखों पर हाथ धर लिया।

नरायन ने कहा, "महाराज! गिरस्ती है। इसमें इतनी शक्ति कहाँ जो यह सब झेल ले।"

"तुझे भी तो", किशनलाल ने हँसकर कहा, "दो चीते उठा ले गए थे। उन्होंने क्या तुझे मार डाला?"

रूप ने कहा, "वे हज़ूर की माया थी, चीते नहीं थे। आपने चमत्कार दिखाया था। मगर मैं तो तीन दिन में होश में आया था।"

"तूने पाप किया।" फिर कहा, "ठाकुर! तैने पाप किया है?"

"मैं क्या जानूं महाराज!" उसने डरते हुए कहा।

"और धन मिलेगा तो और पाप करेगा?" किशनलाल ने उसे घूरते हुए कहा। उसकी आँखों की सफेदी चौड़ी हो गई थी।

"नहीं करूँगा महाराज!" ठाकुर धरती पर लोट गया, "धरम करूँगा। दाऊजी को गया धाम पहुचाऊँगा।"

"ठीक! हमने भी तेरे बाप के प्रेत को यही वचन दिया है। जा, बज़ार जा। एक ढकोला खरीद ला। ऊपर से अच्छी तरह धोती से ढंग दीजो उसे। नीचे दूध का कटोरा रख दीजो और कोठरी का ताला अच्छी तरह बन्द कर दीजो। कल हम तुझे तेरे बाप के दर्शन कराएँगे। डरेगा तो नहीं?"

"आपके रहते क्या डर महाराज!" नरायन ने कहा।

"अब जा!" किशनलाल ने कहा, "मगर खबरदार! औरत न जाए उधर!"

“नहीं जाएगी महाराज!”

“तू रात-भर दरवाज़े पर सोएगा?”

“सो जाऊँगा।”

“अलग!!”

“जो हुक्म!”

“तो जा।”

ठाकुर नहीं गया।

“क्यों?”

“महाराज, यह सब करके भी क्या होगा? धन किसके लिए महाराज!”

“तो जाने दे।” किशनलाल ने हठात् कहा।

“महाराज!” वह फिर पैरों पर लोट गया।

नरायन ने कहा, “ठाकुर कहते हैं कि घर में बेटा नहीं है।”

किशनलाल मुस्कराया।

“जा!” नरायन ने कहा, “हो जाएगा। महाराज को मंज़ूर है।”

लोट-लोटकर नाक धरती से रगड़कर ठाकुर उठा और चला गया।

रूप हँसा।

“क्यों हँसता है मूर्ख!” किशनलाल ने डाँटा।

वह बोला, “क्यों बे! हमीं से! अब यहाँ कौन है?”

किशनलाल हल्के-से मुस्कराया। वह ऐसी मुद्रा में था जैसे कोई बनिया अपनी दूकान में बैठा हो। बोला, “बोल!”

“बोलना क्या है? ठाकुर के पास बीस एक तोला सोना है। और कुछ नहीं।”

”औरत ने बताया?”

“हाँ, इसकी औरत असल में ठकुरानी नहीं, खबासिन है।”

“नाइन?”

“नहीं। रज़वाड़ों की गोलिन है। ये खरीद लाया है।”

“तभी!” किशनलाल ने पूछा, “तैने उसपर रंग जमा दिया?”

“वो मेरे साथ भागने को तैयार है।”

“सच! क्यों?”

“ये बुड्ढा है। और मैंने उसे लालच दिए हैं।”

“तो सब समेटकर तू ले जा उसे परसों। परसों जो मेरे हाथ लगेगा, लेकर
में भी...।”

“पर औरत को ले जाने से फायदे? घर भी तो है।”

“सोच ले। मुझे तो कोई ज़रूरत नहीं।”

रूप मुस्कराया, बोला, “अब तो मुझे भी नहीं रही।”

किशनलाल को उस मुस्कान में विष लगा। वह इतनी मेहनत और दिखावा कर रहा था। मज़े ले रहा था। रूपनरायन। एक प्रतिहिंसा-सी जल उठी उसमें। बोला कुछ नहीं। सोचता रहा। उसे ध्यान आया। जो भी सिद्धता उसमें थी, वह इसीलिए कि रूप साधक था।

उसने सोचकर कहा, “कल मैं उसे साँप दिखाऊँगा। तू साँप ला!”

“मैं!” रूप ने कहा, “सचमुच का?”

“कोई कालबेलिया तुझसे नहीं ढूँढ़ा जाता। रात में ले आ उसे। मैंने बीन सुनी थी दुपहर के सन्नाटे में!”

“किधर?”

“सामने चला जा।”

रूप चला गया।

आधी रात को निस्तब्धता में सपेरा आया। बीस रुपये फेंककर विषदंत उखड़ा एक साँप रूप ने खरीदा और किशनलाल उसे पकड़कर हँस उठा। उसने उसे आस्तीन में छिपा लिया। फिर कहा, “सुन।”

बहुत देर तक उसे कुछ समझाता रहा।

दूसरे दिन अलसभोर में ठाकुर ने आकर देखा कि महाराज जाग रहे थे, लेकिन नरायन सो रहा था। ठाकुर की पालागन से वह जागकर उठ बैठा। पेड़ों पर पक्षी चहकने लगे थे। धूनी की लपट अब हल्की लगती थी, राख अधिक थी। जगार कछार पर भी आ गई थी। नदी में नावें चलने लगी थीं। उधर की ओर साग वाले नौकाओं में साग की बड़ी-बड़ी डलियाएँ लिए जा रहे थे। जमुना पर सफेदी छाई, फिर वह नीली दीखने लगी।

“रात-भर जागा ठाकुर!” किशनलाल ने कहा।

“हाँ महाराज!”

“चल।”

वह आगे-आगे चला। पीछे-पीछे ठाकुर और नरायन। वे जमुना की खादरों के एकान्त मार्ग से घर पहुँचे। द्वार पर किशनलाल ने रुककर कहा, “खोल।”

ठाकुर ने ताला खोला।

किशनलाल भीतर घुसा और उसने तीन लम्बी साँसें लीं, जैसे कुछ सूँघ रहा था। बोला, “बाप आ गया तेरा।”

ठाकुर ने सन्देह से देखा।

“एक कपड़ा लेकर चौक में बिछा दे।”

उसने जाजम बिछा दी।

किशनलाल ने हाथ ढकोले में पूरा घुसेड़ दिया। फिर कहा, “दूध क्यों नहीं पिया तूने अभी तक!”

फिर ढकोले पर कान लगाकर सुना। फिर हठात् उसकी आँखें लाल हो गईं। वह कड़ककर बोला, "ठाकुर, तू पापी है!"

ठाकुर थर्रा गया।

"दूध किसने रखा था?"

"मैंने महाराज!"

"काढ़ा किसने था?"

"ठकुरानी ने!"

"गोलिन ने, नीच! ठकुरानी के हाथ का होता तो इसी पी न लिया होता।"

बाहर नरायन काँप रहा था। ठाकुर की गोलिन विक्षोभ से कोठे से बाहर आ गई।

किशनलाल ने चिल्लाकर कहा, "वह पापिन है। ठाकुर, देख तेरा बाप अब मेरा हाथ लगने से दूध पिएगा।"

उसने ढकोला उलट दिया।

नरायन ने जैसे चक्कर खाकर दीवार पकड़ ली। गोलिन पीछे हट गई। ठाकुर की आँखें फट गईं। साँप दूध पी रहा था। जब वह पी चुका तब सरकने लगा। ठाकुर की तो जैसे आत्मा ही कूच कर गई।

"सोने की देहली बना ठाकुर!"

ठाकुर दौड़कर सारा गहना ले आया और उसने किशनलाल को दे दिया। किशनलाल ने सारे गहने ज़मीन पर डालकर ढेर लगाया और साँप को उसपर से गुज़ारकर सब पर ढकोला घर दिया। सबको जैसे चैन आया।

"वचन दे!" किशनलाल ने कहा, "गयाधाम पहुँचाऊँगा!"

ठाकुर ने तिरवाचा भरे।

"कहाँ है तेरी गोलिन?"

वह काँपती हुई आई।

"बोल! पाप की माफी मिले। घूँघट काढ़! तेरे ससुर हैं।"

उसने घूँघट काढ़कर साँप से क्षमा माँगी।

किशनलाल ने कहा, "नरायन!"

"हाँ महाराज।"

"हम जाते हैं। ठाकुर द्वार पर रहे। तू और ठकुरानी बारी-बारी तीन-तीन घंटे से इसे दूध पिलाना। अभी यह खज़ाना और बताएगा।"

"मैं नहीं महाराज!" नरायन ने कहा, "यह सिद्ध पुरुषों के काम हैं। मुझमें इतनी हिम्तत कहाँ।"

"तू ठाकुर!"

"नहीं महाराज!"

"तो फिर हमीं रहेंगे। ठाकुर! शाम को ठकुरानी जाकर हमारी धूनी से राख लाए और तब हम इससे पूछेंगे।"

स्त्री डर गई। बोली, पर्दा तोड़कर, "कहाँ! मैं तो मर जाऊँगा वहाँ अकेली!"

"तो नरायन! तू इसके संग जाना। वहाँ बेताल मिलेगा।"

नरायन ने कहा, "मैं नहीं महाराज! हारी को भेज दो।"

"हारी नहीं। वह मूर्ख अपढ़ है। हमारी आज्ञा है कि तू ही जाएगा। वर्ना..."

"चला जाऊँगा महाराज! कोप न करें।" उसने पाँव पकड़ लिए।

सिद्ध उसीं ढकोले पर सिर रखकर सो गए। न रोटी, न पानी। ठाकुर द्वार पर बैठा रहा। एक बार उठा तो कहा, "कहाँ जाता है? खबरदार! यहीं किनारे बैठकर रोटी खा ले।"

"हारी आया है।"

"उसे बता देगा तो कुछ हरज होगा तेरा?"

"सारे गाँव में खबर फैल जाएगी।"

"तो उसे भेज दे।"

ठाकुर हारी को टहलाकर आ गया।

धीरे-धीरे शाम हो गई। जमुना में धोबी कपड़े समेटने लगे। कुछ धोबिनें अब भी पत्थरों पर कपड़े पीट रही थीं। ऊँचा लहँगा किए वे भीगी खड़ी थीं। और दूर कहीं कई लम्बी-लम्बी टाँगों के सारस, ढेंक, सवन और बगुले अपनी ही किस्म के मिलते-जुलते भाई-बन्दों के साथ खड़े थे। कभी-कभी किसी की लम्बी गर्दन पानी में जाती, कभी चोंच खाली निकलती, कभी छटपटाती मछली को तोड़ती। पुल पर से रेल चली गई और कुछ यात्रियों ने जमुना मैया में पैसे फेंके, जिन्हें रेती में खेलते, काछियों के लड़कों ने हुड़दंग मचाकर ढूँढ़ना शुरू किया। हज़ारों पक्षी अपने पंखों में अँधेरा समेट लाए। और फिर क्षितिज की तरफ उड़ते हुए खो गए। मानो अँधेरा एक बहुत बड़ा घोंसला था, जिसमें टिमटिमाता पहला सितारा ऐसा उग आया, जैसे किसी बया ने जुगनू पकड़कर रख लिया हो। सिद्ध किशनलाल समाधि लगाए थे। दूर कहीं बगीची में आरती होने की आवाज़ आई और घंटे, झालर, शंख बज उठे। जमुना ने करवट बदली और फिर धुँधलके के स्पर्श से सफेद-सी दीखने लगी। यह वह ब्रजभूमि थी, जिसकी धरती में संतों के, भक्तों के गीत रमे पड़े थे, जिसकी लोरियों से हिमालय के उन्नत शिखरों से लेकर महासमुद्र तक की लहरें गूँज उठी थीं। शान्त, निस्तब्ध हो गया प्रकृति को कोलहल और महासमुद्र तक की लहरें गूँज उठी थीं। शान्त, निस्तब्ध हो गया प्रकति का कोलाहाल और फिर पेड़ों की मर्मर के अतिरिक्त कुछ भी सुनाई देना बन्द हो गया।

किशनलाल ने आँखें खोलकर कहा, "ठाकुर!"

"हाँ महाराज!" वह हाथ जोड़कर बोला।

"ठकुरानी और नरायन को भेज दे।"

ठकुरानी और नरायन डरते हुए खड़े रहे।
“गहने उतारकर ठाकुर को दे।” उसने कड़ककर कहा।
उसने रुआँसे मुँह से सब गहने उतार कपड़े में बाँधे और ठाकुर को दिए।
ठाकुर का मन खिल गया।
दोनों चले गए।
“ठाकुर”, किशनलाल ने कहा, “सर्पयोनि में है तेरा बाप!”
“हाँ महाराज!”
“दीपक जला ला।”
ठाकुर ने दीपक जलाया।
देर हो गई। कोई नहीं लौटा।
“ठाकुर!”
“हाँ महाराज।”
“जा, द्वार पर झाँक!”
देखा। नरायन बदहवास भाग आया और हक्का-बक्का-सा गिर पड़ा।
“डर गया है।” किशनलाल ने कहा और हाथ उसके माथे पर धर दिया।
ठाकुर ने आश्चर्य से देखा कि वह सुस्थिर हो गया।
“क्या बात है?” किशनलाल ने कहा।
नरायन ने कहा, “महाराज! वह तो...”
“क्या?”
“बेताल ने पकड़ लिया।”
किशनलाल हँस पड़ा।
बोला, “यह तो होना ही था।”
फिर कहा, “ठाकुर! तुम दोनों जाओ! यह मिट्टी उसके लगाना। आ जाएगी।”
यह कहकर किशनलाल ने आँगन की मिट्टी उठा ली और दोनों हाथों में धर के रगड़ी। फिर एक भारी-सी चीज़ नीचे पटककर मिट्टी ठाकुर के हाथ में दी।
दीपक के प्रकाश में ठाकुर ने देखा—वह भारी चीज़ शायद एक अशर्फी थी। उठाने को झुका कि किशनलाल ने कहा, “मत उठा, वह तेरी नहीं है। तेरे बाप की है। पहले उसे मना ले, फिर सब ले ले। जा, देर मत कर।”
ठाकुर जब रूप के साथ पहुँचा, उसने देखा, वह पागल-सी नाच रही थी। रोंगटे खड़े हो गए। हिम्मत नहीं पड़ी कि पास जाए।
नरायन ने कहा, “जाओ, पकड़ो!”
“मैं नहीं पकड़ सकता।” ठाकुर ने कहा, “देवता से लड़ना मेरी ताकत के बाहर है।”
“तो फिर?”

"तुम महाराज को ले जाओ।"
"मैं नहीं जाता!"
"क्यों?"
"वे गुस्सा होंगे। मैं डरता हूँ, अगर गुस्सा भरकर एक बार देख भी लिया तो बिच्छू के सौ-सौ डंक-से लगेंगे। मैं भुगत चुका हूँ एक बार! तुम ही जाओ!"
ठाकुर लौटकर आया। किशनलाल हाथ में साँप लिए कुछ बातें कर रहा था।
ठाकुर की बुद्धि चकित थी। बोला भर्राए स्वर से, "वह नहीं आई।"
"झूठ!" किशनलाल ने कहा, "वह तो नाचती थी। तू पकड़कर क्यों न ले आया!" ठाकुर बिल्कुल परास्त हो गया।
"चल, हम चलते हैं।"
ठाकुर की जान में जान आई।
ठाकुर चलने लगा।
"तू यहीं बैठ।"
वह बैठ गया। किशनलाल चला गया।
कुछ ही देर में नरायन आ गया।
नरायन ने कहा, "उफ! आज का-सा नहीं देखा।"
"क्या?" ठाकुर ने डरते हुए कहा।
"कैसी भयानक लड़ाई हुई!"
"किसमें?"
"बेताल और महाराज में।"
"सच!"
"उफ्! कह नहीं सकता।" वह आँखें मींचकर जैसे गिर पड़ा।
रात बढ़ चली।
ठाकुर सो गया।

जब ठाकुर की आँखें खुलीं, नरायन नहीं था। वह प्रतीक्षा करता रहा। जब धूप चढ़ने लगी तब वह डरा। दौड़ा-दौड़ा धूनी पर गया। केवल राख पड़ी थी। न उसकी औरत थी, न महाराज। बदहवास-सा दौड़कर आया। गहने! गोलिन के गहने गायब! उसने डलिया उलट दी। गहने गायब थे, केवल साँप निकला। ठाकुर चिल्लाकर भागा और बेहोश होकर गिर गया, क्योंकि उसका सिर दरवाज़े की चौखट से लगकर फट गया था।

जब हारी आया और बैल बाँध चुका, उसने देखा, ठाकुर औंधा पड़ा था। उठाया। ठाकुर फटी-फटी आँखों से देखता रहा। फिर वह उठा और भीतर के कोठे की ओर चला। देखा। कोने की मिट्टी उलटी हुई थी और गड्ढा था। उसमें एक नरमुण्ड रखा था।

ठाकुर ने देखा और पागल-सा भाग उठा। यह छोटा-सा ठाकुर पचास हजार का आसामी था। उसके छिपे माल की भी चोरी हो गयी थी। ठाकुर भिखारी हो गया था।

हारी ने उसकी यह हालत देखी तो भाग निकला। गाँव वालों ने देखा और वे कुछ भी नहीं समझ पाए। ठाकुर कुछ भी नहीं बोलता था।

पाँच

दुपहर ढल चुकी थी। अनारो आकर पास बैठ गई। किशनलाल ने सिगरेट सुलगाई।

“क्या कर रही है?” किशनलाल ने पूछा।

“सो रही है।” फिर कहा, “कहाँ से ले आए?”

“मैं क्या ले आया, खुद आ गई।”

“एक पंजाबी तलाश में था। शाम को ले जाएगा। मैंने दिखा दी है।”

”वह समझ गई?”

“अभी नहीं।”

“झगड़ा तो न करेगी?”

“झगड़ा क्या करेगी? तुमने कैसी पाई?”

“मुलायम है।”

“यही मुझे लगा था। कहती थी, यह मेरे मर्द के दोस्त हैं। मैंने कहा, ये तेरे मर्द नहीं? झेंप गई।”

किशनलाल हँसा। बोला, “फिर क्या दोगी?”

“तीन सौ का माल है।”

“क्या रख लोगी?”

“तुम चाहे सब ले लो!”

“ईमानदारी का सौदा करो। दो सौ मेरे।”

अनारो उठकर भीतर गई। दो सौ गिने। किशनलाल उठ खड़ा हुआ।

जब वह बेलनगंज पहुँचा, रूपनरायन जमुना किनारे भंग घोटता मिला बड़े हनुमानजी के पास। वह किशनलाल को देखकर मुस्कराया। दोनों ने छानी। पीकर मस्त हुए। फिर किशनलाल ने कहा, “कितने का माल निकला?”

“यह है सब!” उसने पोटली खोली।

“तू ले ले कुछ।”

“जो दोगे सो लूँगा।”

“आधा-आधा!”

माल बँट गया। रूपनरायन ने कहा, “अब गाँव चलो भइया। मुझे पुलिस का डर है।”

किशनलाल ने हँसकर कहा, “बोदे।”

दोनों उठे।

रूपनरायन ने कहा, “मैं कुछ पुर्ज़े लेता आता। एकाध की ढलाई भी ज़रूरी है।”

“तो मैं चलूँ। तू आ जाइयो!”

किशनलाल चलने लगा। तब वह हँसा।

“हँसा क्यों?”

“गोलिन का क्या हुआ?”

“वह तो तेरी थी। मुझे देखकर भाग गई वो तो।”

वह फिर हँसा। किशनलाल मुस्कराया। उसने रूप के गर्व को खंडित कर दिया था।

“सिद्ध जी!” रूप ने कहा, “सब कुछ पाया, उसे न पा सके!” उसके उस गर्व के सामने भी किशनलाल ने सत्य नहीं कहा। बोला, “तू तो जानता है, मैं उधर नहीं जाता। मुझे पराई स्त्री से घिन आती है।”

रूप को अपनी तुच्छता का आभास हुआ। बोला, “भाग्य है यह भी।”

किशनलाल रहस्यमय ढंग से मुस्कराया। दो सौ रुपयों के नोट जेब में रखे थे। जब किशनलाल चला गया तब रूप ने अँधेरे की प्रतीक्षा प्रारम्भ की। आखिरी बस का टाइम हो चला। उसने छोटा-सा बक्स उठाया। उसमें पचास हज़ार की नकदी थी, जो गोलिन से मिलकर उसने उड़ाई थी। किशनलाल को इसका ज़रा भी पता नहीं चला था। गोलिन को जब किशनलाल ले भागा तब वह समझी कि रूप आ मिलेगा, किन्तु जब एकान्त में सिद्ध का असली रूप उसने देखा, तब वह समझ गई कि वह मिलीभगत था। उसके पास और चारा नहीं था। केवल कहा : “उससे न कहना।” “नहीं कहूँगा,” किशनलाल ने कहा, “चल, उसी के पास पहुँचा दूँ।” वह चुपचाप चल पड़ी। उसे आशा थी कि पचास हज़ार तक पहुँचने का अब मार्ग यही था। अतः उसने उस विषय में किशनलाल से कुछ नहीं कहा। अनारो के घर पहुँची तो रात थी। राहें सुनसान थीं। उसे पता नहीं चला कि वह कहाँ थी। अनारो ने द्वार खोला। किशनलाल से कहा, “नरायन आ गया न?” और आँख मिचकाई।

अनारो घुटी-घुटाई थी। समझ गई, कुछ दाल में काला था। गोलिन का सुन्दर मुँह देखकर भाँप गई, बोली, “आया तो था अभी। आता होगा साँझ तक।”

किशनलाल ने फिर कहा, “कह गया है कुछ कि मैं उसकी औरत को यहाँ पहुँचाऊँगा?”

“हाँ, कह तो गया है।” अनारो ने कहा और मुड़कर गोलिन से कहा, “आओ।”

गोलिन सन्तुष्ट हो गई। फिर किशनलाल की समस्या का हल हो गया। वह जानता था कि पंजाबी कहलाने वाला व्यक्ति वास्तव में पंजाबी नहीं था, एक दलाल था, जो औरतें

बेचने के गिरोह का सदस्य था।

रूपनरायन ने एक लम्बी साँस ली और मन में वह सिहर उठा। आधी रात के समय मरघट में जाते हुए भी वह इतना सशंक नहीं होता। उसे मन ही मन पुलिस का बड़ा भय था; परन्तु वह आखिरी बस से चल पड़ा। किसी का भी उस पर ध्यान नहीं था। उसका हृदय कुछ स्थिर हुआ।

किन्तु सोमोती का मन घर पर उतना ही अस्थिर था। मदन के उत्तर ने कितना बड़ा सत्य एक विवशता के रूप में प्रस्तुत किया हो, किन्तु पहली बार वह अपने को अकेला महसूस कर रही थी।

द्वार पर बोल सुनाई दिया।

झाँककर देखा।

मंगल कह रहा था, "अभी तो नहीं आए!"

बिहारी था।

"और किशनलाल?"

ऊपर से आवाज़ आई, "कौन है भाई?"

"मैं हूँ।" बिहारी ने कहा, "आ गए किशनलाल!"

"मैं तो रात ही आ गया था, साँझ डूबे।"

जावित्री ने उसकी ओर देखा।

बिहारी के जाने पर बोली, "आधी रात की साँझ कर दी?"

"अरे भइया, सुनते हैं!"

"मैं पूछती हूँ कि तुम कहाँ गए थे?"

वह बैठकर बोला, "बताऊँ?"

"बताओ!" वह उत्सुकता से पास आ गई।

किशनलाल ने एक पुड़िया खोली। भीतर भस्म थी। जावित्री ने देखा।

"यह क्या है?"

"इसे मलाई में रखकर खा ले।"

"किसने दी है? भभूत!"

"इसी सिद्ध के पीछे मारा-मारा फिरा। तेरे लिए!"

उसने अन्तिम शब्दों पर ज़ोर दिया। वह गद्‌गद-सी देखती रही। बोली, "सच! तुम्हें इतना ध्यान है?"

"है! तुझे क्या कहूँ! तेरा बाँझपन क्या मुझे नहीं अखरता?"

जावित्री के जैसे बिच्छू ने डंक मारा। वह बाँझ है! और जो चम्पो नाइन कहती थी, अगर वही ठीक हो तो? मर्द का दोस कौन देखता है! एक विक्षोभ भीतर ही भीतर भर गया। एक अज्ञात-सी कल्पना मन में दौड़ गई। जावित्री सिहर उठी।

किशनलाल उठ खड़ा हुआ।

वह चला गया, किन्तु जावित्री ध्यान में डूबी बैठी रही। किशनलाल यही समझा कि वह भभूत पाकर बेहाल हो गई थी, कृतज्ञता और सन्तान पाने की भविष्य की कल्पना से वह यह नहीं समझा कि उसने कितना बड़ा तूफान उठाकर जावित्री के स्त्रीत्व में छोड़ दिया था, जिसमें उसका मन तिनके-सा उड़ रहा था।

किशनलाल ने देखा, बिहारी ने बदरी के घर में प्रवेश किया। वह भी उधर ही चला गया। बदरी उस समय सोने की एक करधनी लिए देख रहा था। बिहारी को देख उसने जल्दी से गावतकिए के नीचे छिपा दी। मोखे से किशनलाल ने इसे देखा। बिहारी से अभी बदरी की राम-राम ही हुई थी कि किशनलाल ने प्रवेश किया।

"आओ पंडित!" बदरी ने कहा, "कहाँ हो आए?"

"गए थे रूपनरायन के साथ कि आगरे में सिनेमा देख आएँ। उसे कुछ पुर्जे-उर्ज़े बनवाने थे। हम वहाँ एक साधू से भिड़ गए। उसी की सेवा में समय लग गया।"

फिर वह लच्छेदार भाषा में सिद्ध का वर्णन करने लगा। दोनों प्रभावित हो गए और उसने कहा, "लेकिन रूप अपने धन्धे में लगा रहा।"

कुछ देर बाद वह उठ खड़ा हुआ और उसने बाहर आकर खाँसा और कहा, "हाँ बोहरे, सुनो! वह तो बताओ।"

बदरी उठ आया। बिहारी को किशनलाल का बदरी से एकान्त में बात करना बड़ा नागवार गुज़रा, क्योंकि वह अपने को रामलाल का खासुल्खास समझता था। उसने देखा और बाहर आ गया और बोला, "तो चलें बोहरे!"

"अरे क्यों-क्यों? बीड़ी तो पीते जाओ!" बदरी ने कहा।

"फिर पी लेंगे।" उसने उखड़े स्वर से कहा और वह चला गया। किशनलाल हँसा और धीरे से बोला, "यह समझता है कि तुम कुछ न जानते होगे, न मैं जानता होऊँगा।"

बदरी को कड़े की याद हो आई। फिर उसने टाला, "हाँ, तुम बताओ।"

"यह अँगूठी है।" उसने जेब में हाथ डाला।

"भीतर आ जाओ, भीतर!" बदरी ने कहा।

पच्चीस रुपये में गिरवी रखकर किशनलाल चलने लगा। बदरी जानता था कि मुफ्त की रकम आ रही है। इसकी क्या हैसियत कि किसी दिन ये भी गहने छुड़ा सकेगा। ऐसे आसामी को संग पहुँचाने में दोष भी क्या था।

जब वह लौटा और उसने तकिया उठाया तो दिल धक्क से रह गया। ठोस सोने की कौंधनी थी। उसकी आँखों के सामने अँधेरा-सा छा गया। फिर वह जागा। शायद तकिये के

नीचे नहीं रखी थी। एक-एक चीज़ उसने उलट-पुलट दी। भीतर भागकर देखा। फिर बाहर आया। फिर शक हुआ—शायद उस आले में हो। रंडुआ वैसे था। अकेला। सन्नाटे में घबराहट बिना सहानुभूति के बढ़ती भी ज़्यादा है। तब!! ध्यान आया।

वह तो उसे लाया था!

यहीं रखी थी तकिये के नीचे!

वह उसे देख रहा था!

बिहारी आया था। फिर आया था किशनलाल। लेकिन किशनलाल तो अँगूठी लाया था। वह बाद में गया था। पहले बिहारी गया था। बीड़ी तक के लिए नहीं रुका! क्या काम था उसे। कैसी रुखाई दिखाई थी! नहीं, वह डर रहा था कि पकड़ा न जाऊँ। आया ही क्यों था वह! ज़रूर, तब वह कौंधनी देख रहा था, बाहर से चमक गई होगी और बिहारी भीतर आ गया। आता क्यों नहीं! और करता ही क्या है!

सहसा ही वह काँप उठा।

बिहारी सुनार है। उसे तो कौंधनी गलाना भी आता है।

लगा कि तालू में काँटे उछल आए।

किशनलाल का दिल पहली बार धक-धक कर उठा। आज उसने गाँव में दूसरा हथकंडा दिखाया था। इसका परिणाम क्या होगा? अचानक दिमाग में आया— बिहारी! मन की गाँठ कस गई। पुरानी ईर्ष्या नसैनी बन गई। भाव अब निःशंक होकर चढ़ने लगे। वह घर पहुँचा। भइया कोठे में थे। वह पीछे से घुसा। जावित्री रसोई में थी, चूल्हे के पास। वह तुरन्त भूसी के ढेर की ओर बढ़ा और उससे उस कौंधनी को उसमें छिपा दिया। फिर इधर-उधर जाँचा। कोई नहीं था। तब वह फिर छिपकर अड्डे पर जा बैठा।

मास्टर आलूबुखारा को आते देखा। उधर से सुक्खी बराई आ रहा था।

मास्टर दिल्लगीबाज़ था। उसने सुक्खी को देखकर हाँक लगाई, “अजी नैक सुनते जाना!”

तनकर सुक्खी ने रुककर गुस्सेभरी आँखों से देखा। लोगों ने ठहाका लगाया।

सुक्खी ने खिसियाकर कहा, “ज़रा जल्दी में हूँ। घर आलूबुख़ारा छोड़ आया हूँ। बन्दर न ले जाएँ।”

लोग फिर हँसे।

मास्टर चिढ़ता नहीं था, उसने एक शगूफा बना रखा था। बोला, “अरे वह तो बन्दरों के ही खाने की चीज़ है।”

“और क्या मास्साहब!” किशनलाल ने हँसकर कहा, “खट्टी चीज़ है कि कड़वी!”

“थू, थू!” मास्टर ने कहा, “बड़ी जहर। कूड़ा-कजूरा। कुछ हलवा हो, मिठाई हो! बताओ, किस बुरी चीज को खाने जा रहा है! राम-राम! अकल तो देखो!”

सब फिर हँसे। बराई फिर चला तो मास्टर ने नारा लगाया—“अजी नैक सुनते जाना!”

सुक्खी भुनभुनाता चला गया।

किशनलाल ने कहा, "बिचारा! खाएगा आलूबुख़ारा!"

अब मास्टर अकेला पड़ गया। एक बोला, "माट सा'ब! आपने पहले-पहल कहाँ खाया?"

"अबे चल उल्लू!" मास्टर ने कहा, "वह कोई खाने की चीज़ है!"

"क्या चीज़ मास्साहब!" किशनलाल ने टोका।

एक ठहाका लगा।

तभी बदरी सामने से आता दीखा। किशनलाल जिस मस्ती में हँस रहा था, उसे देखकर उसका संशय खंडित हो गया। वह समझ नहीं पाया कि क्या कहे?

बदरी ने कहा, "किशन भैया, सुनना।"

उसका उतरा हुआ चेहरा देखकर किशनलाल जैसे चिन्ता में पड़ गया।

एकान्त में बदरी ने कहा, "मैं लुट गया।"

"क्यों? अँगूठी खराब है। लौटा दो। रुपये ले लो!" किशनलाल ने भौं चढ़ाकर कहा, "कड़े भी असली हैं, अँगूठी भी।"

"मैं...मैं...वह नहीं कहता।" उसने गुस्से से काँपते स्वर में कहा।

"तो फिर?" वह जैसे अब चौंक उठा।

"दस तोले की सोने की करधनी थी। एक ठाकुर ने गिरवी रखी थी, मेरे यहाँ। वह खो गई।"

"खो गई? कैसे? कब?"

किस प्रकार प्रारम्भ करे बदरी, कुछ क्षण सोचता रहा। फिर बोला, "तुम आए थे तब तकिये के नीचे रखी थी।"

"बदरी!" किशनलाल ने कड़ककर कहा, "अभी तेरे घर से आकर घर भी नहीं गया, यहीं हूँ। ले ले मेरी नंगाझोली। लेकिन जो झूठा नाम लगाया है तो याद रख, मैं भी बामन का बेटा हूँ। यह तो तू है जो छोड़े देता हूँ, जो कोई और होता तो हलक में हाथ डालकर जीभ खींच लेता!"

बदरी बनिया ही था। उसके पास सबूत भी नहीं था। उसे किशन पर अधिक सन्देह भी नहीं था। उसकी आँखों में आँसू आ गए। उसने उसका हाथ पकड़कर कहा, "ऐसा मत कहो पंडित! मैं तुम्हारी गौ हूँ। उबार लो। मर जाऊँगा। तबाह हो जाऊँगा। हाय, मैं तो लुट गया!"

"पुलिस में जाकर रपट कर दे।"

"किस पर कर दूँ?"

"क्या बात हुई, वह तो बता!"

बदरी ने सारी घटना सुनाई।

किशनलाल सुनकर व्यंग्य से मुस्कराया। पर बोला नहीं। बदरी देखता रहा—दयनीय दृष्टि से लेकिन किशनलाल नहीं बोला।

“अब बताओ, क्या करूँ मैं?” बदरी ने पूछा।

“भई, मैं क्या बताऊँ?”

“क्यों?”

“भई, तू जो चाहे कर। मुझसे मत पूछ।”

“क्यों पंडित! तुम तो अपने ही हो!”

“अपनों का ही तो रोना है; मुँह खोलते धरती फटती है बदरी बोहरे! मैं मजबूर हूँ। मेरा मुँह बन्द है। मैं करूँ तो क्या करूँ?”

उसके रहस्यमय स्वर को सुनकर बदरी ने धीरे से कहा, “कह तो दो!”

“कहने को क्या बाकी है? चोर तो ज़ाहिर ही है। पर मैं तो नहीं कह सकता!”

“मैं लुट जाऊँ?”

“तो मैं भइया के खिलाफ बोल दूँ बौहरे! वे कुछ करें। उनकी सोहबत पर मैं क्या कह सकता हूँ। पर वे बड़े हैं। मैं कुछ नहीं कह सकता। गवाह एक मैं ही हो सकता हूँ, सो देखा तो मैंने भी नहीं उसे उठाते, ले जाते। पर फिर भी थाना ले-देकर उसे पकड़कर, मार-पीटकर मनवा सकता है, पर मैं...मैं कैसे कह दूँ? तू ही बता बौहरे! ऐसे में तू ही कुछ करता?”

“ऐ लो! तुम भी ऐसी बात करते हो! धरती पर धरम कहीं रहेगा कि नहीं! ये कौन जाने की तुम भी साँठ-गाँठ में न थे, जो पीछे हटते हो। गरीब की आह बुरी होती है। मेरा न्याय का धन, यों अन्याय से चला जाए, सो सोता नहीं रहूँगा। न बोलूँ, सो मेरे मुँह भी लड्डू ही भरे हों, सो भी न समझना। गाँव बदल करा दूँ बदनामी से।”

“सबूत!” किशनलाल ने कहा, “धोखे में रहियो। जो ऐसा खेल खेला गया, उसे भी ओखली में से निकला धान समझियो। कच्ची गोलियां नहीं खेला होगा जो ही तेरी घुड़की में आ जाए। जब तक थाने को गहरी रकम न देगा, उसे पकड़ेगा कौन? और पकड़कर पीट-पाट दिया तो भइया छोड़ेंगे नहीं। सीधे जाएँगे लक्ष्मीकान्त जी के, वे एमेले हैं, उनकी पुरानी मुलाकात है। ऐसपी जब फून करेगा तो थानेदार की पेटी ढीली हो जाएगी। समझ ले। फिर बिना जमानती केस हो सो भी नहीं। भइया ही छुड़ा लाएँगे। तू है किस धोखे में!”

“अरे, मैं तुम दोनों को लिखाता हूँ इकट्ठे, तू बनाता किसे है?”

“तेरी मर्ज़ी! तू साँप की बाँबी में हाथ डाल, फन लगे तो फिर कुछ न कहियो बौहरे! गूजर-माली मत जान कि ब्याज पर ब्याज ले के चूस लेगा बेईमानी से।”

“मैं बेईमान और तुम साहूकार?”

“साले बनिये! होश में बातें कर नहीं तो याद रखियो, असल बामन का मत कहियो! ज़मींदारियाँ गईं, अब अगला वार बौहरों पर ही है। यों मत जान कि काँगरेस देख नहीं रही

है। इनसे बच भी गया तो सोशलिस्टों से न बचेगा।”

“तू डर किसे दिखाता है! मेरा पेट कटा है। तू चाहता है, मैं मुँह में मुलहटी डाल के बैठ जाऊँ?”

“डराता किसे हैं? जा, कर ले जो तुझसे किया जाए! मैं भइया के खिलाफ नहीं जा सकता! घर भरे बिहारी का, डर दिखाए तू मुझे!”

बदरी का स्वर बदला, “मैं तुझसे कब कहता हूँ। मैं उसी की तो कह रहा था।”

“तो सीधे मुँह बात कर!”

यार, तू तो बड़ी जल्दी गुस्सा हो जाता है!” उसने बीड़ी पेश की।

“नहीं, रहने दे!”

“पी भी यार!” उसने कन्धे पर हाथ धरकर कहा।

किशनलाल इस परिर्वतन से मन ही मन मुस्करा उठा। उसने बीड़ी सुलगाई और कहा, “मेरा कड़ा चोरी गया। मेरे सामने तूने अपने यहाँ रखा। कभी तैने पकड़वाने की बात की? आज अपना माल गया तो दाँत निकाल दिए। कुछ हमारा दिल भी देख! बात तक कही! सब अपना स्वारथ देखते हैं।”

बदरी झेंपा। बोला, “भाई! वो अकेले में धर गया था। एक की धरी चीज़ दूसरे को दिखाना कायदे-खिलाफ है।”

किशनलाल ने कहा, “वो अकेले में ले गया, तो झूठी गवाही देना भी कायदे खिलाफ है।”

बदरी निरुत्तर हो गया। बोला, “मैं क्या करूँ? कुआँ-पोखर ढूँढूं?”

किशनलाल ने धुआँ उगलकर कहा, “पागल है यार तू! तुझे देख मुझे दया आ जाती है।”

“मैं जानता हूँ। तू दयावान है।” बौहरे ने कहा।

“तू एक काम कर!”

“क्या?”

“तू भइया से जाकर कह!”

“फायदा! वो मानैगा नहीं।”

“सो तो बात है।”

हल नहीं निकल रहा था। हल निकाला स्वयं बिहारी ने उधर से निकलकर। बदरी देखकर ही भभक उठा। इससे पहले कि कोई सँभले-सँभलाए, उसने लपककर बिहारी का गला पकड़ लिया और बुरी तरह चिल्लाया, “चोर! यों निडर घूम रहा है। निकाल कौंधनी! साले! सोने की थी! तू माल गलाकर बेच-बेच के हमारी जान को धनी बनैगा!”

बिहारी इस आक्रमण की कल्पना भी नहीं कर रहा था। अड्डे पर लोग मौजूद थे ही। भीड़ इकट्ठी हो गई। लोग तरह-तरह की बातें करने लगे।

"अच्छा नहीं किया बिहारी ने।"

"अजी सुनार की जात का भरोसा क्या? अपनी अम्मा तक के गहने गढ़ें तो चुरा लें।"

"अम्मा खुद कहे, बेटा, चुरा ले, वर्ना बेटा लुट जाए।"

"हिश, बकने की बात है।"

"बात शक की तो है। बौहरा बदरी! इसे कौन नहीं जानता? ज़िन्दी मक्खी निगल जाए!"

"वो ले गया, यह देखता रहा!"

पर दर्शक दर्शक थे। बिहारी का मुख अपमान और विक्षोभ से लाल हो गया था। क्रोध से मुँह से बोल भी नहीं निकल पा रहा था। किशनलाल ने उसे छुड़ाते हुए कहा, "बौहरे, क्या करते हो? क्या करते हो?"

"तुम हट जाओ जी!" बौहरे ने फिर झपटने की कोशिश करते हुए कहा, "कमाल करते हो। तुम्हारे भैया का यार है तो मैं क्यों चुप रहूँ? लूट थोड़े ही मची है। ऐसा क्या राज उठ गया?"

"उठा ही जानो बौहरे!" किसी ने व्यंग्य किया, "तुम्हारा तो उठ ही चला।"

"तो अब लुच्चों-उठाईगीरों को हो गया?" बौहरे ने फूत्कार किया, "मैं पुलिस में जाता हूँ।"

पुलिस का नाम आते ही कुछ भीड़ सरकने लगी। किसी ने कहा, "ले जाओ पुलिस में। यों ही पकड़वा दो गरीब को। रिश्वत दे देना। तुम्हें तो हर तरह से गला काटना है।"

किसी और ने कहा, "चाकू पर खरबूज़ा, या ख़रबूजे पर चाकू बौहरे! पुलिस सबसे बड़ा बौहरा है। याद रखना, गवाही की ज़रूरत हो तो हमें बुलाना, पर कलाकन्द तैयार रखना।"

पान की दुकान पर खड़े छैलाओं ने ठहाका लगाया। तब तक मुअज़्ज़िज़ लोग आ गए थे। मास्टर केदारनाथ ने बढ़कर कहा, "छोड़ दे बदरी, यह क्या तूने फौजदारी कर रखी है?"

"मैं लुट गया!" बदरी बोला।

"तो कानूनी कार्रवाई कर! छोड़! हट! परे हट! बिहारी! यह क्या सुनैं हम तेरे बारे में? ऐसा नाम और ऐसा काम! राम-राम! साँच को आँच क्या? झूठ है तो जा तौहीन का दावा कर। सचमुच ले आया है तो दे दे। देख, कितना दुखी है बिचारा..."

"बिल्ली के लिए कुत्ता हूँ बनिया-बनैटे! असल सुनार का न होऊँ तो कहियो! झूठ नाम लगा के लूटेगा तू?

परन्तु बदरी का पक्ष यों भले ही कमज़ोर रहा हो कि वह बौहरा था। सबको उससे नफ़रत थी, लेकिन यों पक्की तरह से मजबूत हो गया कि वह धनी था और बिहारी था नामी कबाड़िया। गरीब पर चोरी का इल्ज़ाम बहुत बड़ी चोट होती है, क्योंकि जब वह सच

बोलता है तब वह पक्का झूठा समझा जाता है। केवल त्यागी मनुष्य की सत्य के प्रति अटल निष्ठा ही गौरवमय होती है। चतुर ही धनी होता है। चतुराई काव्य-कला की जानकारी नहीं होती, वह होती है धन कमाने की तरकीब। जो उस हथकंडे को जानता है, वह गरीब को बेईमानी भी साबित कर सकता है, क्योंकि धन शक्ति है, शक्ति न्याय है और गरीबी बेवकूफी का ही दूसरा नाम है। और क्योंकि गरीब बेवकूफ होता है, वह धनी की नियमावली का पालन करता हुआ, धनी का विश्वास करता है, अपने जैसे दूसरे गरीब का नहीं।

शोर-गुल मदन ने सुना तो दौड़ा-दौड़ा रामलाल के पास जाकर आवेश से बोला, "भैया!"

दुकान पर रामलाल खाली बैठा था। इस उत्तेजित स्वर को सुनकर निश्चित नहीं कर सका कि यह दुःख का स्वर था या हर्ष का।

बोला, "क्या हुआ?"

रामलाल की उम्र ज़्यादा न थी, लेकिन बड़ा भाई होने के नाते वह बुजुर्गों में आ गया। पत्नी के मर जाने के बाद उसने फिर विवाह नहीं किया क्योंकि जावित्री और उसकी पत्नी में सदा ही लड़ाई रहती थी। वह यह निश्चय नहीं कर पाया था कि खोट किस औरत का था। वे दोनों ही रसोई के बर्तनों की तरह खटका करती थीं। पत्नी को भगवान ने मेरे बच्चे को जन्म देते समय उठा लिया। रामलाल ने भी गमछा फाड़ दिया। लोगों ने उसमें धार्मिक वृत्तियों का उदय देखा।

मदन ने कहा, "बिहारी भैया..."

"क्या हुआ?" उसने उसी अविचलित स्वर से पूछा।

"चोरी में पकड़े गए।" मदन ने आज मुखर होकर कहा। उसके भीतर जो ज्वाला थी, फूट निकली।

रामलाल हिल उठा।

"कौन! बिहारी?"

"हाँ भैया!"

"क्या कहता है?"

"सच भैया! बदरी बौहरे ने पकड़ रखा है।"

"बदरी ने?"

"उसकी दस तोले की कौंधनी..."

"तू दुकान पर बैठ। मैं आता हूँ।" कहकर उसने गल्ले के बक्स में चाभी घुमाई और उठ खड़ा हुआ। मदन का मज़ा किरकिरा हो गया। वह स्वयं वहीं जाकर देखना चाहता था। आलूबुख़ारा से सुनकर आया था।

मन मारकर बैठा रहा।

रामलाल को आते देख बदरी चिल्लाया, “लो देख लो पंडित! करामात देख लो! वह खड़ा है चोर। कह दो, नहीं है! तुम तो कहोगे ही !”

रामलाल इस अप्रत्याशित आक्रमण के लिए तैयार नहीं था। उसने किशनलाल को देखा। किशनलाल ने तुरन्त बढ़कर कहा, “देख बौहरे! सँभल के बोल!”

“मैं तुमसे क्या कहता हूँ! तुम तीन भाई हो तो मूँग दलोगे छाती पर!”

“हाँ, दलेंगे!” किशनलाल गरजा, “अगर बिहारी ने चोरी भी की है, और भइया कहेंगे तो हम तेरा खून पी लेंगे।”

भीड़ फिर इकट्ठी हो गई। बातें शुरू हो गईं।

“यह क्या कह रहा है किशनलाल!”

“ऐसा क्या दल बाँध लिया है!”

“रामलाल, पट्ठों का दम मत भर! सालिग के नौ पट्ठे बेटे थे। बड़ा गरव करता था। एक दिन में पिलेग ले गई सबको।”

“खानदान तो रावण का भी बड़ा था। एक न बचा।”

“बौहरे, सोच के बोल। रामलाल का नाम क्यों लेता है!”

“नाम नहीं लेता मैं,” बौहरे चिल्लाया, “दुहाई है गाम की। गाम से राम हारा। गाँव से भगा दो। जीने मत दो। मर जाएगा गरीब, पर सताने का फल भी सोच लो।”

भीड़ से स्वर आए, “साला घिघियाता है। पानी छान के पीता है, लहू अनछाना।”

रामलाल बिहारी की ओर बढ़ा। बिहारी दृढ़ था।

“बिहारी!” रामलाल ने घूरा।

उसने आँखें उठाईं। पूरी। “हाँ।”

“तूने किया ऐसा?”

“तुझे विश्वास होता है?”

रामलाल का सिर झुक गया। फिर उसने बौहरे से कहा, “और कौन था वहाँ?”

“कोई नहीं।” उसने कहा, “किशनलाल था। अरे मैं क्या छिपाऊँ? इस बिहारी ने मेरे यहाँ कड़ा रखा...”

“खबरदार!” किशन चिल्लाया, “अब समझ में आया! कड़ा निगलने की तरकीब है!”

बिहारी की आँखों में खून उतर आया।

बदरी ने कहा, “मत कहो। तुम पच्छ ले लो! पर मैं तो जानता हूँ।”

रामलाल स्तब्ध खड़ा रहा। फिर कहा, “बौहरे! तू धरम से कहता है?”

“गंगा की सौगन्ध? मैं इससे भी सौगन्ध उठवाऊँगा। ये ईमान से कह दे, इसने नहीं ली। मैंने छोड़ी रामलाल!”

बिहारी की मुट्ठियाँ भिंच गईं।

हठात् रामलाल ने कहा, “चोरी बिहारी ने नहीं की है।”

उसका गम्भीर स्वर गूँज उठा। बिहारी आवेश में मूर्च्छित हो गया।

"उठा किशनलाल!" रामलाल ने उसे पकड़ते हुए कहा, "बौहरे, थाने जा। रपट लिखा दे। फैसला कचहरी में होगा।"

एक क्षण सब स्तब्ध रह गए।

बदरी ने कहा, "अच्छी बात है। ले जाओ। मैं भी देख लूँगा।"

भीड़ में से रूपनरायन ने निकलते हुए कहा, "क्या देख लेगा तू! बेईमान कहीं का!"

रूप की आवाज़ सुनकर बौहरा दब गया। वह बोला, "तुम भी रूपनरायन...तुम भी..."

"चला जा, मैं कहता हूँ।" रूपनरायन चिल्लाया, "साले! तू भैया रामलाल के आगे खड़ा होगा! कौन-सी कौंधनी? कहाँ की कौंधनी? सब जानता हूँ, बड़ा बौहरा है तू! चोरी का माल रखता होगा! तू यह न जान कि मुझे पता नहीं है। तेरी रग-रग पहचानता हूँ। आ गया बड़ा साहूकार। दस तोले की कौंधनी! तेरे बाप ने देखी थी! तू बामनों से अटकैगा बनिया-बांटू। साले ने तरकीब भी कैसी लगाई। अबे! ऐसे तू जो मेरे यहाँ से नौलक्खा हार चुरा ले गया, वह कब देगा, बोल। दो गवाह देकर अभी थाने में मुँदाता हूँ।"

वह आगे बढ़ा और गरजा, "कर लीजो जो चाहे! हाँ, हाँ, फाँसी पर चढ़वा दीजो। तू परमात्मा है तो हमें जीना ही मंजूर नहीं।"

उसने दोनों हाथों पर बिहारी को उठा लिया और रामलाल से कहा, "क्या भैया, तुम भी! दो हाथ तो दिए नहीं।...और तू भी खड़ा रहा चुपचाप!" उसने किशनलाल से कहा। फिर बोला आगे बढ़ता हुआ, "यही तो वह बिहारी है जिसको मेरे घर के सामने मेरा सौ का नोट पड़ा मिला था, और पुकारता दे गया था। बोलते क्यों नहीं भैया! कौंधनी से तो सौ का नोट पचाना आसान था। बिहारी चोरी करैगा? अगर बिहारी चोर है तो कोई अपने बाप का जाया नहीं!"

दूकान पर बिहारी को लिटाकर पानी के छीटें मुँह पर दिए। हवा की। वह उठ बैठा। सब ओर देखा और फिर रोने लगा।

"खबरदार!" रामलाल ने कहा, "रोता क्यों है! हमारे रहते डरता है! ऐसे तो हम भी किसी पर जुरम लगा दें कि हमारी बछिया खोल ले गया। सबूत तो अँगरेज़ के ज़माने में भी था, बादशाही ज़माने में भी था, राजा के राज में भी था। क्या काँगरेस के राज में अब नहीं माँगा जाएगा?"

किशनलाल ने मीठा बनकर रूप की ओर देखकर कहा, "ज़माना बुरा है रूपन! बुरे ही आजकल भले कहलाते हैं। है न?"

रूप के शरीर में फुरफुरी-सी आ गई। बोला, "सो तो है, लेकिन बेकसूर पर अन्याय कैसे देखते रहें चुपचाप!"

रामलाल ने कहा, "कल की-सी याद है मुझे। बिहारी और हम छोटे-छोटे थे। एक लड़के ने मदरसे में इस पर एक-दूसरे की किताब की चोरी लगाई। पंडितजी ने इसे खूब

मारा, पर यह माना नहीं। इसकी मुट्ठियाँ भिंच गईं। बाद में चोर पकड़ा गया। मैं तो इसकी मुटि्ठयाँ भिंचते ही समझ गया था, इसने चोरी नहीं की।"

"वहाँ और था कौन?" रूप ने पूछा।

"वहाँ कोई चोर था ही नहीं। अपना किशन था बस!" रामलाल ने ज़ोर से कहा।

रूप ने कनखियों से किशन को देखा। किशन ने रूप को।

सब चले गए थे। बौहरा अपने घर गया था। रामलाल और मदन भीतर थे, दुकान के किनारे बिहारी था। रूप और किशन बाहर खड़े थे।

"अब सब ठीक हो जाएगा," किशन ने कहा, "बिहारी भैया! तुम ससुरे की रिपोर्ट कर दो थाने में कि मुझे मारा इसने, झूठा इल्ज़ाम लगाकर।"

रामलाल ने कहा, "झगड़ा क्यों बढ़ाते हो! उससे क्या मिलेगा!"

रूप और किशन चले।

रूप ने कहा, "बिहारी से क्या दुश्मनी है?"

"मेरी भला क्या दुश्मनी होगी!"

"कौंधनी कहाँ है?"

"मुझे क्या पता!"

"दाई से पेट छिपेगा अब?" उसने मुस्कराकर कहा।

"पागल हुआ है!" किशन ने कहा, "लेकिन तूने बुरा किया।"

"क्यों?"

"अब भइया ही उस पर सब खरच करेंगे।"

"वह है ही बेकसूर।"

"तू दे दे न!"

"मेरे पास क्या है?"

"सब गल जाएगा। चल, शहर चलें।"

किशन ने कहा, "तेरे पास भी तो है। दया-धरम पड़ोस से क्यों न शुरू करै !"

"मेरे-तेरे में फरक ही क्या है?"

किशन निरुत्तर-सा हुआ तो मुस्करा दिया।

"अच्छा, मैं चक्की चला।" रूप मुड़ गया।

किशनलाल घर चला। रास्ते में बदरी फिर मिला। मुँह मोड़कर जाने लगा।

"क्यों? रूठ गए?" किशन हँसा।

"तुझे दिल्लगी सूझ रही है!"

"मुझे?"

"और क्या?"

"पर मैं करता क्या? मौका आने दे।"

“तो?”

“रूप ने मज़ा बिगाड़ दिया!”

“इसका मैंने कब क्या बिगाड़ा था!” बदरी ने सोचते हुए कहा। फिर सोच नहीं पाया। कहा, “गंगा की सौंह! मेरा तो इससे कोई सम्बन्ध ही नहीं।”

“जाने दे। धीरज धर। एक दिन सच्चाई भी खुलेगी। मैं अब भी कहता हूँ कि करने वाला कर गया। पर यों वसूल न होगा माल। समय आने दे। क्या करूँ? मैं मजबूर हूँ। आज़ाद नहीं हूँ। मेरे पास माल नहीं है। तू मदद करे तो तरकीब करूँ।”

“क्या करेगा?”

“रूप को मिलाना होगा।”

“कैसे?”

“देख मैं कुछ जुगत करूँगा। पर तू मठ मत मार दीजो!”

“आज़मा के देखना, बौहरे का वचन ही परमान है।”

उसके बाद जब किशन घर पहुँचा, उसने सारे भूसे को खगोर डाला। कौंधनी नहीं मिली। क्या हुआ? सामने जौंगरा जुगाली कर रहा था।

यह खा गया क्या?

यह विचार ही विचित्र था।

उसका सिर घूम गया।

जब वह ऊपर पहुँचा देखा, जावित्री उसे पहने खड़ी थी।

“तुम्हें कहाँ मिली?” उसने हठात् उसे खींचते हुए पूछा।

जावित्री ने कसकर पकड़ते हुए कहा, “क्यों, तुम्हें क्या? कैसी लगती है?”

“अरी लगती है की बच्ची! चोरी का माल है।”

वह रुआँसा हो गई। बोली, “मैं नहीं जानती।”

“चुप, चुप! छिपा दे कहीं! भूसे से निकाल लाई है?”

“भूसे में पड़ी थी। तुम्हें कैसे पता? तुमने चुराकर रखी थी?”

“अरी लड़ोकरी की! मैं ऐसा गधा था! तूने मुझे चोर समझा है! यह तेरे जेठ बिहारी बौहरे ने बदरी के यहाँ से उड़ाई और यहाँ छिपाई। सुबह-शाम का आना-जाना। सबेरे इधर से वह निकला तब मैंने छिपकर देखा।”

“तभी क्यों न उठा लिया?” उसने सन्देह से पूछा।

“कोई ज़रूरत थी। मैंने तो देखना चाहा था कि बिहारी करता क्या है?”

“हाय, वो चोर भी है!”

“असल का।”

“हमें फँसाना चाहै?”

“यह वक्त की बात है।” उसने सिर हिलाकर कहा, “भइया कहते हैं, बिहारी ऐसा नहीं कर सकता।”

जावित्री ने उतारकर करधनी हाथ में ले ली। तिलड़ी, सुन्दर चीज़ थी। मुग्ध नयनों से देखती रही।

“तू रख ले।” उसने कहा। यद्यपि मन में वह बहुत उदास था। “पर कभी पहरियों मत।”

“रात-बिरात घर में पहन लूँगी।”

“और मदन जान गया तो?”

“वह न जान पाएगा। उसके सामने नहीं पहनूँगी।”

स्त्री की आभूषण के प्रति अत्यन्त आसक्ति देखकर किशनलाल को एक वितृष्णा हुई।

वह जिस ‘मौन’ के साथ अपने कार्य सम्पादित करता था, इस बार वह नहीं हो सका। केवल बात बिहारी पर जाकर नहीं ठहरी। वह फैल गई और रूप। रूप समझ गया। यह भी अच्छा नहीं हुआ। किशनलाल के सामने समस्याओं ने अपना रूप बदल लिया था। वह बैठ गया।

जावित्री ने कहा, “रोटी ले आऊँ?”

वह बोला, “नहीं लूँ जरा।”

वह कुएँ पर चला गया।

छह

जावित्री का मन उदास रहता। वह कुछ चाहती और वह स्वयं उसे प्रकट नहीं कर पाती। दुर्भाग्य से उसकी चाहना भौतिक परिधियों में होकर भी कल्पना पर अधिक आरूढ़ थी। सन्तोष मन की तृप्ति है। वह बहुत कम को आता है। सामर्थ्य होते हुए भी अधिकारों का उपभोग न करना इस संसार में कठिन होता है। मन में 'हाय' बैठ जाने पर कोई भी औषधि काम नहीं करती।

उसने लेटे हुए किशन को देखा तो सामने आ बैठी। कुछ घूँघट माथे पर खींचा। कुछ चेहरा चमकाया और कहा, "अब क्या होगा बिहारी का?"

एकान्त में वह जेठ नहीं भी कहती थी, क्योंकि किशन के हृदय का इतना परिचय तो उसे था ही कि बिहारी के प्रति उसकी कोई आसक्ति नहीं थी।

"होगा क्या?" किशन ने कहा, "जो होने को होगा, सो ही होगा।"

इस गोलमोल उत्तर से उसे चैन नहीं पड़ा। बोली, "सच! तुमने उसे कौंधनी छिपाते देखा?"

किशन ने कहा, "क्यों? बिना देखे ही कह देता!"

"बड़े कलेजे का मानस है।"

"और हमें फँसाने डोलता है!"

"हाय दैया! जो कहीं कोई और देख लेता!"

"तो यही समझता कि हमारे यहीं से सब काम होता है।"

"एक बात कहूँ?"

"कह।"

"तुम बुरा तो न मानोगे?"

"बुरा मानने की होगी तो मान लूँगा।"

"नहीं, सच। मज़ाक नहीं करती। तुम कभी नहीं सोचते?"

किशन का माथा कुछ ठनका। पूछा, "क्या?"

"तुम कब तक ऐसे आसरतू बने रहोगे?"

पौरुष पर चोट बैठी। और ठीक पत्नी ही कहे कि उसका पति आश्रित है।

कहा, “सबका हिस्सा है दूकान में, मकान में, ज़मीन में। भैया सबकी देखभाल करते हैं। मैं कहता हूँ, ठीक है।”

“पर तुमको भी तो कुछ करना चाहिए?”

“मैं कुछ नहीं करता?”

“क्या करते हो? करते होगे तो मुझे क्या खबर? मुझे तो कुछ बताते नहीं!”

“तुझे क्या बताऊँ मैं, बाहर की बातें तू क्या समझेगी?”

“तभी तो मेरे भाग हैं ऐसे!” कहकर जावित्री ने एक लम्बी साँस ली। फिर कहा, “हमारा अपना घर कब होगा?”

‘अपना’ शब्द पर उसके स्वर अपने-आप दबाव डालकर लरज़ उठे।

किशनलाल हठात् गम्भीर हो गया। उसने कहा, “वह दिन भी दूर नहीं है बेवकूफ! उसी दिन के लिए सारी कोशिश है।”

“पर करोगे कैसे?”

“यह मेरा काम है, तुझे मतलब?” उसका स्वर कुछ क्रुद्ध था। जावित्री को सोमोती की स्वतन्त्रता का रूप दिखाई दिया।

सोमोती की याद आते ही बोली, “तुमने सुना! मदन गया था! शिवलाल ने चमेली को नहीं भेजा। मैं कहती हूँ कि ये रिश्ते-नाते झूठे हैं। अपने तो अपने ही होते हैं। सोमोती अकेली खट रही है।”

किशन में कौतूहल जागा। सोमोती के बारे में वह और भी जानना चाहता था। उसने कहा, “रूप भी दो दिन से नहीं मिला।”

जावित्री ने व्यंग्य किया, “वह कामकाजी ठहरे। लगे होंगे।”

बात किशन के मन में बैठ गई। बोला, “उसके पास पैसा काफी है।”

जावित्री के मन में एक लालसा-सी जाग उठी। स्त्री को आभूषणों और वस्त्रों की चाहना होती है। वह देखती थी कि सोमोती के पास ज़्यादा चीज़ें थीं। उसे सब कुछ माँगना पड़ता था। वह कभी-कभी ईश्वर से प्रार्थना करती कि ऐसा हो कि वह अपने पिता के साथ अकेली रह सके, न कोई नातेदार हो, न रिश्तेदार।

छोटे परिवार में अपने स्वार्थों को काटना नहीं पड़ता। बड़े परिवार में एक-दूसरे के सुख के लिए स्वेच्छा और निरंकुशता को काम में नहीं लाया जा सकता। त्याग की भीत पर सामूहिक जीवन आता है, आत्म-सुख की नींव पर वैयक्तिक जीवन।

जावित्री के मन में इच्छा हुई कि यदि कोई ऐसी राह निकल आती कि वह सोमोती की भाँति धन की स्वामिनी होती। फिर विचार आया—कहाँ रखते होंगे वे लोग पैसा! उस दिन सोमोती ने बक्स खोले थे, उनमें तो कुछ खास चीज़ थी नहीं। ज़रूर धरती और भीतों में गाड़ रखा होगा।

‘गाड़ना’ एक रहस्य लिए रहता है। जावित्री उसी कल्पना में डूब गई।

फिर ईर्ष्या बलवती हो उठी। उसके पास धन है, एकान्त अधिकार है, सुन्दर पति है, और फिर मातृत्व है। यह एक ऐसी बात थी जिसने उसके मन को झकझोर दिया। पैसा तो आता-जाता है। अधिकार की बात नहीं, किसी तरह जीवन बीत जाए। पति की सुन्दरता क्या! सुन्दरता तो स्त्री का लक्षण है। कमाऊ हो, घरवाली की रोटी का इन्तज़ाम कर सके। काफी है। यह ज़रूर है कि काना-कुबड़ा न हो। लेकिन यह मातृत्व! यह तो हरएक स्त्री के लिए आवश्यक है। इसके बिना स्त्री का सम्मान ही क्या है। घर के पिछवाड़े बीजू केले उग आए थे। उन्हें उसके देखते ही देखते काट डाला गया था। कहने वालों ने कहा था, “जिसमें फल ही न आएँ, उस ढाँचे को रखा न रखा बराबर!”

और तब विचार आया। बाँझ स्त्रियों के भविष्य का ही क्या ठिकाना? मर्द दूसरा ब्याह कर लेता है। तो क्या बिना बच्चे को जन्म दिए जावित्री को भी यही देखना होगा? क्या उसकी भी छाती पर एक नई स्त्री आकर मूँग दलेगी?

यह कल्पना ही भयानक थी। स्त्री कभी स्त्री पर विश्वास नहीं करती। स्त्रियों में मित्रता भी नहीं के बराबर ही होती है। संयुक्त परिवारों में प्रायः झगड़ा तभी होता है, जब बहुएँ आती हैं। सृष्टि को बढ़ाने वाली, जननी होकर भी प्रायः ही दूसरी स्त्री के साथ नहीं रह पाती। इसके लिए धन की आवश्यकता नहीं है। बिना धन के भी मन नहीं मिलते और धन का बहाना हो तो फिर कहना ही क्या? सौतेली माँ को बिरली अवस्था में ही प्रेम भरा पाया जाता है। समाज में घर प्रेम की नींव है, किन्तु प्रत्येक घर समाज में वैयक्तिक स्वार्थी प्रेम का प्रतीक बनता है, जो अपने चारों ओर दायरा खींचकर पड़ोसी से सच्चा प्रेम नहीं करता।

जब किशन चला गया तब वह उठी और सोमोती के घर गई। सोमोती लेटी थी। गर्भ से विश्रान्त। उसमें एक अजीब-सी गर्व-भावना थी। उसकी दृष्टि में मानो जावित्री का कोई महत्त्व ही नहीं था। जावित्री इसे समझ गई।

“आओ बहू!” सोमोती ने कहा, “मेरी तो तबियत ही ठीक नहीं। सोचती थी कि बुलाने से कहीं बुरा न मानो!”

“क्यों मानूँगी भला!” वह बैठी।

“ब्याह पीछे देवर के संग रही हो। इतने आदमियों की रोटी-पानी है। मैंने सोचा, बुलाऊँ। कहीं कोई काम रुके। मैं किसी को तकलीफ न देना चाहूँ।”

“तुम तकलीफ़ कहो जिठानी जी! ऐसा दिन ही तो एक-दूसरे की ज़रूरत बतावै। जनम-मरण के लिए ही तो पड़ौस है।”

मरण की बात सोमोती को बुरी लगी। कैसी औरत है। शुभ में भी अशुभ बोलती है। बोली, “भले का बुरा न चीत बहू। मसाला चढ़े से तेरा काँच भी दरपन बन जाएगा। भाग्य की बात है।”

जावित्री को बहुत घिन हुई। बोली, “उसका क्या है? मैं तो तुम्हारा काम करने आई थी। तुम मंगल, बड़े लाला, छोटे लाला को बुलाती हो न? मैं समझी, कुछ मैं भी काम आऊँगी।

मुझे न मालूम था!"

"क्या?" सोमोती ने तेज़ स्वर में पूछा।

"हाँ," जावित्री ने लापरवाही दिखाकर कहा, "जिन लुगाइयों को देवर मिलें, उन्हें देवरानियों की ज़रूरत ही क्या?" वह उठकर चलती हुई बोली, "मुझे तो बहुत काम है। कहो! अबकी बार कौन-सा देवर भेज दूँ?"

सोमोती का मन बिच्छू का डंक खा गया। बोली सुनाकर, "कोई बात नहीं बहू! भगवान ने चाहा तो कभी तू भी शायद यह दिन देखे!" वह हँस दी।

वह हास्य बड़ा ही कुटिल था। जावित्री के मन में उसकी तड़पती खुनक जमकर अटक गई। घर जाकर पानी पिया। घृणा से मन भर रहा था। बिस्तर पर जाकर पड़ रही। देर तक मुँह ढके पड़ी रही।

ये अपने को समझती क्या है सोमोती!

इसे घमंड किसका है? कैसे गहने पहने थी आज। कितनी घिनौनी लग रही थी। पेट जैसे सूज गया है।

उस बेला की नीरवता में उसे लगा, कहीं कोई धीरे-धीरे बात कर रहा था। वह उठी और टोह ली। बगल के कोठे में ही से तो आवाज़ आ रही थी। उसने देखा, किवाड़ भिड़ा हुआ था।

संघों में से देखा, दोनों भाई बैठे हुए थे। मदन ने कहा, "फिर?"

किशन ने कहा, "तू सोच ले।"

"तुम बताओ, क्या करूँ?"

"तू फिर मेरा नाम ले देगा।"

"मैंने कब लिया तुम्हारा नाम!"

फिर कहा, "तुमने तहसील के कागज़ में खुद इबारत बढ़ाई थी। मैंने तुम्हारा नाम लिया! तुम तो बच जाते हो, मैं बदनाम होता हूँ।"

"तो फिर छोड़!"

"कैसे?"

"मैं तो किस्मत की मार सहने वाला आदमी हूँ। भुगतना है, तो भुगतेंगे ही!"

"पर मैं तो इस भुगतने से मर जाना अच्छा समझता हूँ।"

"तू आज़ाद है। मैं गिरस्ती आदमी ठहरा। मैं बँधा हुआ हूँ।"

जावित्री को दिलचस्पी हुई।

किशनलाल का स्वर सुनाई दिया, "तू छोटा था। मैं भी लड़का-सा ही था। तब दादा मरे थे। उस समय यही घर पर थे। और भाभी थी। गाँव में कौन नहीं जानता कि हमारे बाप को हमारे बाबा ने धन दिया था। वह धन कहाँ गया? बड़े धरमात्मा बनते हैं। सारे का सारा डकार गए। दुकान हथिया ली, खेत हथिया लिए। कहते हैं—मेरा कौन है? जो कुछ करता

हूँ, तुम्हारे लिए। वक्त की बात है। बड़े हैं, इसलिए मैं भी कुछ नहीं कहता। तू जानता है कि आजकल अड़ोसी-पड़ोसी किसी घर की लड़ाई देखकर मज़ा लेते हैं, हाथ सेंकते हैं। सब पी जाता हूँ।"

"पर तुम्हारा तो हाथ चलता रहता है। मुझे तो पैसे-पैसे की तंगी रहती है। हर चीज़ के लिए उनके सामने हाथ फैलाना पड़ता है। और हर बार पूछते हैं—इत्ता खर्च क्यों करता है तू? तुम क्या करते हो?"

"मेरे पास तो ससुराल का कुछ है। मैं तो जब सोचता हूँ तब यही सोचता हूँ कि मेरे पास तो कुछ है ही नहीं। अच्छा, एक बात पूछता हूँ।"

"पूछो!"

"तेरा क्या विचार है? वह बिहारी..."

"चोर है साला!" उसने वाक्य पूरा होने के पहले ही कहा।

"मुझे और शक है!"

"वह क्या?" उसने सन्देह से पूछा।

"नहीं, मैं उसे कह नहीं सकता!"

"मुझसे भी?"

"अपनी ज़बान से नहीं।"

"तुम मुझपर भी भरोसा नहीं करते?"

"अरे, करता हूँ, पर तुझे नादान समझने की वजह से नहीं बता सकता।"

"मैं नादान हूँ?" वह आहत हुआ।

"अरे अभी तूने दुनिया में देखा ही क्या है! आजकल मेंढ़क ही साँप को डकार जाते हैं। तू समझता ही क्या है।"

उसके स्वर के वैभव को सुनकर मदन दब गया।

किशन ने फिर कहा, "इस रूप को देखता है?"

"हाँ, हाँ"

"कैसा आदमी है?"

"चोखा है।"

किशन ने बात बदली, कहा, "उस दिन मैं न होता तो बिहारी ऐसा बच निकलता? लेकिन इसने क्यों बचाया?"

"अपनी बिरादरी का आदमी ठहरा।"

"बिरादरी को नहीं, वो सबको घर-घर मोंठ तोलता है। अरे! वह भैया को बड़ा भला और सीधा-सादा समझता है।"

"तो फिर किया क्या जाए?"

जब मदन फिर उबलने को हुआ, किशन ने कहा, “तू ऐसा उतावला क्यों हुआ जाता है! अब ये सोच कि बिहारी पर जो बदरी ने मुकदमा किया है, उसमें क्या बिहारी बच जाएगा!”

“क्यों नहीं बचेगा, जब भैया ही खर्च कर रहे हैं सब कुछ!”

मदन ने दाँत पीसे और कहा, “हमारे लिए पच्चीस सवाल-जवाब हैं और उस चोर की ऐसी खातिर है। मैं कहता हूँ कि ये तो घर को लुटाकर रहेंगे!”

“पर रोक भी कौन सकता है!” किशन ने कहा, “सब कुछ उन्हीं के हाथ में तो है। पर यह न समझना कि बदरी कच्चा है।”

“क्या कर लेगा वो?”

“तू देखता चल! तुझे पता नहीं है।”

“क्या नहीं पता है मुझे! परसों तक तो उसे गवाह भी नहीं मिला था!”

“अरे कब की बातें कर रहा है! वहाँ कचहरी में गवाही हो गई।”

“हो गई!! किसकी?”

“शम्भू की।”

“जो बस के अड्डे पर मोटर के टिकट बेचता है?” मदन ने पूछा, “वह कहाँ था यहाँ?”

किशन हँसा।

बोला, “वह वहाँ क्यों नहीं था?” उसने स्वर बदलकर कहा, “मुंसिफ यह कैसे जानेगा कि नहीं था। शम्भू की बिहारी से पुरानी रंजिश है। जलबोर्ड ने कुएँ खुदाने को आधे रुपये दिए थे न? तब शम्भू ने कुछ रकम उड़ाने की कोशिश की थी, उस कमेटी में घुसकर। उस वक्त बिहारी का दाँव लग गया। इसने पकड़ लिया। तब शम्भू ने कहा-अच्छी बात है, आधा-साझा कर लेंगे। मगर ये तो पूरी रकम डकारना चाहता था, और वो भी अकेले। इसने बड़ा धरमराज बनकर कहा, नहीं, जनता का रुपया न मैं खाऊँ, न खाने दूँ। शम्भू दाँत किटकिटाकर रह गया। बेचारा सीधा-सादा आदमी ठहरा। पर उसने इसे भी न खाने दिया।”

“मैं पूछता हूँ, खा ही गया हो तो क्या अचरज! शम्भू जो तीस-चालीस खा ही लेता तो क्या बिगड़ जाता इसका! बड़ा साँचाधारी बन गया यह सुनार! जनता का रुपया तो खा-खाकर लोग मिनिस्टर, मन्त्री बनते हैं। कोई पूछता है! सरकार हमीं से तो लेती है।”

“लेकिन यह कौन समझाए, किसे? भइया ने भी सुना था तो कहा था—राम-राम! जनता का रुपया भी खाना चाहते हैं ये लोग! सुना तूने! क्या कहा! पर शम्भू भी कौल का आदमी है। मौका देखता रहा। भूला नहीं। अब अवसर देखा तो मैदान में कूद पड़ा। बदला लेकर रहेगा। तूने कभी सुना कि बिगर कलाकन्द भी कोई गवाही देता है, लेकिन शम्भू ने दी है। वह कहता है, बदरी! ये तेरा नहीं, मेरा मुकदमा है। पर बदरी भी निबाहना जानता है। न्यूकट के जूते लाकर शहर से पहनाए हैं उसे!”

"सोलह रुपये से कम की जोड़ी तो क्या आई होगी?"

"और क्या? बदरी कहता था कि मेरे लिए जब ये बखत बरबाद कर रहा है तो क्यों न मैं इसके काम आऊँ। लुगाई भी तभी पाँव दबाती है जब उसके लिए मरद रोटी-पानी का इन्तज़ाम कर देता है। मदन! दुनिया में पैसे की माया है। तूने कभी सुना कि किसी बाप ने अपनी बेटी भिखमंगे को दी हो। सम्बन्ध तो शुरू ही स्वारथ से होता है। उसके ऊपर फिर तरह-तरह के ढाँचे जाले खड़े होते हैं।"

"बिल्कुल यही बात है। स्वारथ ही बड़ा है। सब इसी के पीछे डोलते हैं। सब अपने-अपने आराम की दुहाई देते हैं।"

"अरे मैं तुझे क्या बताऊँ। मोटर की बात है। एक किसान की औरत कहती थी—यह मोटर वाले किराया बढ़ाते हैं। एक ने कहा—तो मरी क्यों जाए! तो कहती है—किसान की कमाई बड़ी गाढ़ी मेहनत की। तावड़ा की धमक में गोरी काली पड़ जाए खाल। अब हल चलाओ, फिर बोओ, फिर नरावा करो, फिर काटो, फिर दाँय करो, फिर बरसाओ, तब कहीं अनाज घर आए। तिसमें आँधी, पाला, बिजली, कड़क, टिड्डी, टिड्डा, पचास जोखों हैं। ये नहीं कि तेल डाला और मोटर चल दी। तो मैं तो सुनता हूँ कि ड्राइवर कहता है—और हम गाड़ी के नीचे सोवैं कालिख में रंगे-पुते! आँधी, गर्मी, बरसात में नदी-नालों मे हाँके। हमारा काम आसान है! कहती है—तेरा पेट भी तो भरै! वह कहता है—तुम्हारा न भरै। पेट तो नीयत से भरै। सुनकर सबने हामी भरी—सो तो है। ईमान उठ गया दुनिया से।"

उसके स्वर में विषाद था।

मदन ने कहा, "तुम तो कानून जानते हो, कोई तरकीब करो!"

"क्या! बता।"

"मैं अलग होऊँगा। तुम भी हो जाओ!"

"मुझे आगे न ला। अभी ऐसा वक्त नहीं आया है। इस समय भैया पर वैसे ही ज़ोर पड़ रहा है बिहारी के खर्चे का!"

"पीछे क्या बचैगा अलग होने को!" मदन ने कहा, "तुम पीछे को रोते रहना। जो है सो अभी है।"

"पर लोग क्या कहेंगे?"

"मेरी बला से! कुछ भी कहें।"

"अरे ऐसे काम नहीं होते!" किशन ने कहा।

जावित्री के मन में आया कि भीतर जाकर तुरन्त मदन की हाँ में हाँ मिलाए, परन्तु तभी उसने किशन का स्वर सुना, "अगर मैं भी खर्च देता हूँ, तो लोग यों न कहेंगे कि भैया घर बरबाद कर रहे हैं। लोग कहेंगे, किशन लुगाई वाला है, वही सब कुछ कर रहा है। फिर तू भैया से ही अलग होना चाहता है कि मुझसे भी?"

जावित्री का मन स्तब्ध हो गया। क्या हुआ यह? कल मदन की बहू आएगी।

“तुमसे क्यों भला!” मदन ने कहा, “कैसी बातें करते हो तुम भी! अरे तुमने कब घर बिगाड़ा?”

“भाई! मेरे पास है नहीं कुछ। लेकिन मैंने कभी तुझे कुछ मना नहीं किया।”

“अरे मुझे याद है। मैं बुखार से उठा था। ठीक हो गया था, पर भैया जबरन मुझे लँघन पै लँघन कराके भूखा मारे डाले दे रहे थे। मैं तो मरा जा रहा था भूख के मारे। तुमने उस बखत मुझे छिपा के ब्याह के घर से पूड़ियाँ लाकर दी थीं। वो दिन आज का-सा याद है। उनकी तरकीब फेल हो गई। मैं मरा नहीं।”

“अरे खाये से कौन मरता है बावले!” किशन ने कहा, “आदमी भाग्य से मरता है। चम्पो नाइन का घर वाला, पेट फूल गया, ज़िन्दगी से ऊब गया, जंगल में डडा थूहर का दूध पी गया कि मर जाऊँ। मगर पीते ही जो बेहोश होकर गिरा है, कि तीसरे दिन भला-चंगा। बराबर पानी बहा देही से। मरा नहीं, जी उठा। घर आ गया। अब देख। मरने वाला घर बैठे मरता है कि नहीं?”

“दिन-दहाड़े!” मदन ने सिर हिलाकर कहा।

फिर बातें धीरे-धीरे होने लगीं। जावित्री सुन नहीं सकी। चम्पो की याद आ गई। वह उसी से मिलने को चल दी।

दूसरे दिन घर में सन्नाटा-सा छा गया।

केवल रामलाल का स्वर सुनाई दिया, “किशन!”

कोई उत्तर नहीं।

जावित्री नहीं बोली।

“बहू! किशन सबेरे का गया अभी नहीं आया?”

कोई उत्तर नहीं।

“मदन है?”

वह चुप रही।

“रोटी भी नहीं खा गया?”

वह फिर चुप रही।

“अरे कमबखत! रोटी तो खा लेता!”

फिर बिहारी का स्वर आया, “बस, बहुत हुआ। वही तो तुम पर मुकदमा दायर करे और तुम्हें उसी की चिन्ता हो।”

“बच्चा है वह,” रामलाल ने कहा, “मुझ पर केस करता है बावला। कह देता तो मैं उसे नाहीं कर देता?”

“हुँह! यह मज़ाक नहीं है।” बिहारी ने फिर कहा, “भैया! इसमें चाल है। तुमने इनके लिए क्या न किया? और अब तुम पर यह चोट!”

फिर आवाज़ सुनाई नहीं दी।

जावित्री को मन कुलबुलाने लगा।

कैसा मुकदमा! भैया पर! मदन ने किया! जेठ भी क्या कहते हैं! पर भड़काने वाला है बिहारी। ऐसे समय में न मदन, न पति। वह किससे कहे-सुने। पेट में चूहे कूदने लगे। बेचैन हो गई।

पर कोई नहीं आया। तब वह सो गई। सबेरे उठी तो देखा, किशन खाट पर सोया था, पर मदन नहीं आया था। जब किशन जगा तो बोला, "तू बहुत जल्दी सो गई रात?"

"कौन कहता है?"

"मैं कहता हूँ।" उसने त्यौरी बदली और पूछा, "मदन नहीं आया अभी तक?"

आवाज़ आई, "कौन?"

"मैं हूँ भैया!"

"आ गया किशन!" स्वर में उल्लास था। "आ गया? तेरी ही राह देख रहा था। सुन तो।"

"आया भैया!"

"अरे तूने सुना!"

"क्या हुआ?" वह बाहर गया।

"कब आया तू?"

"रात अबेर हो गई थी। तुम सो गए थे!"

"मदन कहाँ है?"

"ऊपर नहीं है?"

"उसे ढूँढ़कर ला भैया!"

"क्यों? कहाँ गया?"

"पता नहीं," भैया ने हँसकर कहा, "एक मुकदमा-सा कर गया है मुझ पर बँटवारे के लिए..."

"कौन? मदन?"

"हाँ, वही, नादान..."

"मुझसे कहा भी नहीं!"

जावित्री नहीं चौंकी।

"तुझसे कहता तो ऐसा होता ही क्यों? वह पागल है। अरे मैं चला जाऊँगा। मैंने दुनिया देखी है। वह तो लड़का है। कल जाने रोटी भी खाई कि नहीं।"

फिर वे बाहर चले गए दोनों। जावित्री सोचती रही और उसने आटा गूँधना शुरू किया।

किशन सँझा को लौटा।

"रोटी भी न खाई!"

"उसी को ढूँढ़ता रहा!"

“लाला आ गए?”

“आता है बस! अब रुपये माँग रहा है।”

“रुपये? क्या करेंगे?”

“उधर भैया, इधर मदन, पिसा कौन? मैं?”

“तुम्हारे पास हैं?”

“धरे हैं ले!” उसने कहा, “वह अँधेरे पीछे आएगा। तू रोटी ले जा, पीछे; पीछे है, नौहरे के पास।”

“बुला न ले जाऊँ?”

“आ जाए तो ले आ।”

सचमुच मदन उसके साथ आ गया। जावित्री ने रोटी परोसी। खाने लगा।

पर दोनों भाई चुप रहे। जावित्री प्रतीक्षा करती रही। पड़ोस की औरतें बाहर बतरा रही थीं। वह भी वहीं उतर गई। एकान्त होने पर मदन ने कहा “क्यों? क्या सोचा तुमने?”

“किस बारे में?” किशन ने पूछा।

“वही रुपयों के...”

“हाँ! हाँ! कितने चाहिए?”

“सौ एक हो जाते...”

“तू तो जानता ही है, पास तो हैं नहीं...”

“फिर?”

“इन्तज़ाम करता हूँ। पर...”

“क्यों, सोचते क्या हो? दे दूँगा।”

“मैंने तुझे देकर कभी माँगे?”

“कभी नहीं, इसी से तो मुँह खुल रहा है मेरा।”

”फिर ओछी बात क्यों करता है?”

“गलती हो गई।”

“भइया मिलेंगे तो?”

“मैं सामने नहीं पड़ूँगा।”

“हाँ, कहीं मुझे बीच में न डालियो।”

“तुम बेफिकर रहो।”

“पर कब तक छिपा-छिपा रहेगा?”

मदन चुप रहा।

“सुन!” किशन ने कहा, मेरे पास इस वक्त बस तेरी भाभी की एक हँसलिया है। उसे रख दे बदरी के!”

“भाभी की!” वह चौंका, “वह जानेगी तो?”

"उसके लिए बनवाई थी मैंने, पर वह अभी नहीं जानती!"

मदन प्रसन्न हुआ। फिर कहा, "बदरी! वह क्या रखेगा?"

"ज़रूर रखेगा। वह क्या नहीं जानता कि तूने भइया पर मुकदमा दायर किया है। वह तो बड़ा खुश है!"

"तुम्हें कैसे पता?"

"बिहारी मास्टर आलूबुख़ारा से सुनकर आया था, भइया को सब सुना रहा था।"

मदन ने उत्सुकता से पूछा, "सारा गाँव जान गया है?"

"हाँ।"

"सब पूछेंगे मुझसे।"

"शम्भू तुझे ढूँढ़ रहा था।"

जब मदन बदरी के यहाँ पहुँचा, बदरी ने उसे बड़े प्रेम से बिठाया और कहा—"कहो मदन! आखिर तो बाँध टूट निकला। भइया तो मज़े में हैं। हमारी तो उनसे कोई दुश्मनी नहीं!"

मदन ने कहा, "यही तो मैं कहता हूँ। ऐरे-गैरों की हिमायत से हमें क्या?"

"वही तो भइया! पर अकेले आदमी को इसकी क्या चिन्ता कि आगे रहनेवालों का होगा क्या?"

"बात की लड़ाई बताते हैं।"

"हमारी-उनकी क्या बात?" बदरी ने कहा, "हमारी तो उस नंगे-उचक्के से रार है। जेल की हवा न खिला दी तो!"

"उसने चोरी की है, नहीं की है, हमें मतलब?"

"यही तो मैं कहता हूँ। उन्हें क्या पड़ी थी बीच में आकर अपने घर को बरबाद करने की?"

'अपने घर' पर उसने ज़ोर दिया।

मदन ने कहा, "यही तो बात है। समझते हैं कि मालिक हैं! पैसा नहीं है हमारे पास, बस यही कसर है!"

"सब तो रामलाल ने दबा रखा है। होगा भी कहाँ से?"

"अब तुम कुछ मदद करो तो काम चले।"

उसने चौकस स्वर से कहा, "हज़ार जान हाजिर! पर मेरे किए होगा भी क्या?"

मदन के हाथों में हँसुलिया चमकी। कोई पावर-भर सोना। बदरी ने कहा, "बहुत भारी है। कहाँ मिली?"

"भइया की है।"

"किशनलाल की?"

"उन्होंने दी है। मेरा और कौन है?"

बदरी ने कहा, "वह कहता भी था कि उसका तो मुँह बन्द है।" उसकी आँखें चमकने लगीं।

मदन रुपये लेकर चला गया। रात हो गई। बदरी को नींद नहीं आती थी। कहाँ से आया किशनलाल के पास इतना सोना!

उस समय किशनलाल सारे रुपये लेकर, सौ मदन को देकर विदा कर चुका था। मदन का सिर श्रद्धा से झुक गया था। किशन प्रसन्न था। जावित्री को भी पता नहीं चला था।

बदरी को जब यह विचार आया, वह उठ बैठा और दीपक के उजाले में बैठा-बैठा तरह-तरह की बातें सोचने लगा। चतुर बौहरा घर में अकेला था। वह रात को तीन जगह बदल-बदलकर सोता था। उसे सदैव डर लगा रहता था कि कहीं कोई कत्ल न कर जाए।

फिर ध्यान आया, दो कड़े। फिर अँगूठी। फिर पाव-भर सोने की हँसुलिया। पाव माने बीस तोला। दो हज़ार रुपये का माल सिर्फ हज़ार में धर गया। अब वह छुड़ा लेगा? अजी छुड़ा लिए! लेकिन किशन इतनी गिरवी रखकर भी करता क्या है माल का?"

अचानक ही एक भयानक बात उसके माथे में बज उठी। उसने लालच में माल चुपचाप धरा। जाँच नहीं की। क्या वह सब सचमुच सोना है?

बदरी को लगा, सारी दुनिया घूम रही थी। उसने दीवाल पकड़ ली। सोना हराम हो गया। उसी वक्त जाकर कोठरी का बक्स खोला। दिये का प्रकाश दीवारों पर पड़ा और हिला। उसने गहने निकाले। कितने पीले थे। चमकते हुए! नहीं माल असली है।

फिर बक्स में रख दिया।

तभी फिर विवेक ने कहा, और नकली मुलम्मा ही हो तो!

वह फिर व्याकुल हो उठा।

उसने हँसुलिया उठाई और खुरच दी। जो कुछ देखा, उस पर विश्वास नहीं हुआ। वह मूर्च्छित हो गया। जब होश आया तो उठ बैठा। फिर देखा।

हँसुलिया भीतर से नकली थी। तो कड़े और अँगूठी!

सब चाँदी के!

क्यों वह लोभ में इतना अँधा बन गया! उसका मन किया कि अपना सिर दीवार में मारकर फाड़ दे। मन किया, किशनलाल का खून पी जाए। लेकिन सबूत! वे शब्द याद आए किशनलाल के—बोहरे! हमारी-तुम्हारी क्या लिखा-पढ़ी। ईमान का सौदा है। बचन से बढ़कर भी दुनिया में क्या है!

बदरी ने उन वचनों को सुनकर मन-ही-मन कहा था—बेवकूफ!

और आज! बेवकूफ कौन था?

तो क्या कौंधनी भी किशनलाल...

वह हिल उठा। उसने अपना सिर पकड़ लिया।

अब वह कहाँ जाए?

तो क्या बिहारी बेकसूर है?

लेकिन अब?

कौन जाने ये सब मिले हुए हों!

पहले ही वकील ने कहा था कि तीनों भाइयों को बिहारी के साथ लपेट दो, लेकिन उसने सबसे दुश्मनी बाँधने को बुद्धिमानी नहीं समझा। फिर तो बामन-बनिया का सवाल भी हो सकता है। खासकर किशनलाल क्या नहीं कर सकता? अरे यह तो बड़ा भारी ज़ालिम है।

बदरी का मन भीतर ही भीतर घुमड़ने लगा। क्या करे? क्या न करे?

रामलाल के पास जाना तो अब व्यर्थ है। और शम्भू से कहे? लेकिन वह कमीना ही क्या भला है। इस एक गवाही में ही खाने को कलाकन्द तक तो खाया नहीं, ज़माने में तो भला बन गया, मगर भीतर ही भीतर पच्चीस रुपये खा गया। और उस एक गवाही से होता ही क्या है! हाय-हाय! कैसा मौका निकल गया! वकील ने कहा था कि किशनलाल और बिहारी की मिलीभगत साबित करना आसान होगा, लेकिन वह न जाने उस वक्त क्यों डर गया।

बदरी का मन घृणा से कड़वा-कड़वा-सा हो गया। उसे कुछ भी नहीं सूझा। किससे कहे कि 2000 का माल समझ 1000 में रखा था। ज़माना तो बौहरे के खिलाफ है। मुनसरफ भी नहीं सुनेगा। पर यह तो ठेठ 420 का मामला है। फौजदारी का-सा तुरन्त फैसले वाला!

रात बीत गई, परन्तु बदरी राह नहीं निकाल पाया। वह कुछ भी नहीं सोच सका।

सबेरे माथा भारी था। सिर फटा-सा जा रहा था। बदरी मुश्किल से उठा। उसने देखा, अभी तक उजाला पूरी तरह से नहीं हुआ था। वह सीधा रामलाल के पास गया।

रामालाल घर नहीं था। उसकी आदत थी कि सबेरे वह नित्यकर्म से फारिग होकर ही घर लौटता था। किरमिटों की बगीची में वह कुँए पर नहाता।

किरमिट परिवार किसी समय समृद्ध था, परन्तु अब उसका एक भी वारिस नहीं बचा था। बदरी ने उसे वहीं जा धरा।

"तुमने देखा पंडित! जीती मक्खी निगल जाओ। मगर गरीब की आत्मा में बल होता है।"

रामलाल भजन करके उठा था। उसका मन शान्त था। उसने कहा, "क्या सबेरे--सबेरे झगड़ना ही आता है?"

बदरी ने ताना कसा, "धरम तो तुम ही लूटोगे! और हँसुलिया भी धरवाओगे?"

रामलाल नहीं समझा। किन्तु जब बदरी ने सारा किस्सा सुनाया तो वह क्रोध से पागल हो उठा। कुछ देर तक तो वह बोल भी नहीं पाया। फिर उसने कहा, "तू सच कहता है?"

उसका रौद्र रूप देखकर बदरी ने उसके पाँव पकड़कर रोते हुए कहा, “दुहाई है। सच कहता हूँ। तुम्हारी गौ हूँ।”

“हूँ!” रामलाल ने कठोर स्वर से कहा, “मेरे साथ चल। वह बात...घर चल। मदन से पूछता हूँ।” वह कह नहीं सका। गुस्से के मारे उसका गला रुंध गया। फिर कहा, “गाँव गुंडों से भर गया है। मेरा भाई ही क्यों न सही, है तो गुंडा!”

उसकी आँखें सुर्ख थीं।

घर पहुँचा तो देखा—मदन नहीं था, न किशन था। बिहारी भी नहीं था। बदरी ने ताना मारा, “मिलीभगत है पंडित। देख लूँगा। मिट जाऊँगा, मगर मिटा के छोड़ूँगा! तुम्हारी देहली पै कसम खाता हूँ, इसे उलांघने लायक तुम्हें नहीं छोड़ूगा।”

वह चला गया, तो रामलाल कटे पेड़-सा खाट पर गिर गया।

बदरी थाने की ओर बढ़ चला। अब उसका भय निकल गया था, और केवल घृणा, घृणा ने उसमें विष भर दिया था।

आकाश में सूरज ऊपर चढ़ आया था, जब बिहारी ने चौखट पर पाँव दिया। घर में केवल जावित्री थी। और कोई न था। आलूबुख़ारा चले आ रहे थे।

उसने हाँक लगाई, “आलूबुख़ारा!”

उसने नियम बजाते हुए मरे स्वर से कहा, “बच्चा बिचारा।”

फिर पास आकर कहा, “तू कहाँ था?”

उस स्वर को सुनकर बिहारी का दिल दहल उठा। बोला, “क्यों?”

“तुझे कुछ पता नहीं?”

“नहीं तो?”

“रामलाल थाने में बन्द है, किशन छुड़ाने की कोशिश में लगा है। मदन और रूप सबेरे ही आगरे चले गए।”

उसे विश्वास नहीं हुआ। बोला, “ज़्यादा खा गए क्या?”

“अबे उल्लू!” मास्टर ने कहा, “तेरी कसम!”

“रामलाल थाने में?”

“हाँ, हाँ, रामलाल! बदरी ने बन्द कराया है। जाने कौन-से दफे में है, यह तो पता नहीं। बाज़ार में सनसनी है। सारे बामनों में रोस है। लेकिन दरोगा की मुट्ठी ही नहीं, सुपरटेंटड की मुट्ठी तक गर्माई गई बताई जाती है। किशन जमानत के फेर में है, मगर दरोगा कहता है कि जमानत मुंशिफ के यहाँ होगी। शाम तक यों टल जाएगी। कल इतवार है। परसों हथकड़ी डाल के ले जाएगा मोटर में। नाक कट ही जाएगी। क्या रखा है फिर? हमने तो सुना है, तेरा भी वारंट है। तू सबेरे में कहाँ था?”

"मुझे तो किशन ने भेजा था कि मदन के सम्बन्ध के बारे में पत्री मिलवा लाऊँ। शिवलाल है न? रूप का जीजा। उसने भेजी है अपनी बहन की पत्री। पंडित के गया था, वही बैठा रहा। अब जाता हूँ।"

"तो क्या जाएगा? कहाँ?"

"थाने।"

"पागल हुआ है उल्लू! पहले किशन को आने दे।"

"मैंने क्या चोरी की है जो डर जाऊँ! भइया वहाँ रहें और मैं बाहर डोलूँ। जिन्दा मुर्दा हूँ मैं! फूँक दो मुझे मिट्टी का तेल छिड़ककर। समझे!"

मास्टर देखता रह गया। वह उन्मत्त वेग से थाने की ओर चल दिया।

सोमोती ने पूछा, "छोटी! क्या हुआ?"

जावित्री ने सूखे मुँह से कहा, "पता नहीं क्या होगा। सबेरे से भागदौड़ कर रहे हैं। ज़मानत के लिए।"

"खुद नहीं देते लाला?"

"दें क्या? दुकान तो उनके हाथ है, सब उनके पास है, घर में साझा है, क्यों रखे कोई? दोस्त के नाम एक बिहारी हैं, उनके पास क्या है भला?"

"वे भी आज ही सहर जाने को थे! मदन लाल भी नहीं है घर?"

"कोसिस तो है ही। न उनने खाया, न पिया। बड़े भइया के लिए प्रान कंठ में समा गए हैं। मुझे तो देख-देखकर डर लगता है। कहीं उन्हें कुछ हो गया तो, फिर इनका न जाने क्या होगा! वह निपूता बदरी है सत्यानासी!"

"कहाँ ले जाएगा सब! न आगे न पीछे।"

तभी मंगल ने आकर सूचना दी—बिहारी थाने में ही पकड़ लिया गया।

दोनों स्त्रियाँ आतंक से थर्रा उठीं। उसने यह भी कहा कि शायद दोनों को थाने में पीटा भी गया है। जावित्री का मुँह सूख गया। वह रोने लगी। सोमोती ने कहा, "बैरी! घर घालने बनिया! तेरा लहू पियूँ। मंगल! तू आगरे जा। ठाड़ाठाड़ बगदा ला। कहर दे जाकर, लंका की जगह अजुध्या जल गई। अब गाँव का धरम डूब गया।"

मंगल बाहर चला गया।

ज़मानत शाम को ही हो गई। मगर जब रामलाल घर आकर बैठा तो वह गुमसुम था। बिहारी नहीं छूटा, क्योंकि उस पर से मुंसिफ के बिना बंदिश नहीं हटती थी। रामलाल के लिए दरोगा पाँच सौ खा गया था, जो किशनलाल कहीं से लाया था। न रामलाल बोला, न उसने रोटी खाई, न पानी पिया, न मुँह पर से हाथ हटाया। देहरी के भीतर नहीं घुसा।

मदन और रूप शाम को ही आ गए। रामलाल ने किसी को भी नहीं देखा। उसको देखकर सबको रुलाई आती थी।

रूप ने कहा, “भइया, रोटी खा लो।”
वह नहीं बोला।
“किसी से नहीं बोलते!” किशन ने कहा।
दोनों भीतर आए।
“बदरी ने किया?” रूप ने दाँत पीसकर कहा, “बनिये का इतना हौसला?
“बदरी ने किया।” किशन धीरे से बुदबुदाया।
जावित्री की चूड़ी दरवाज़े के पीछे से बजी।
“बहू बुलाती है,” रूप ने कहा, “रोटी खाई?”
भीतर से वह फुसफसाई, “सबेरे का लंघन है।”
“रोटी तो खा ले।” रूप ने प्रेम की फटकार दी।
“भइया तो भूखे हैं।”
रूप की आँखें झुकी रहीं। फिर कहा, “बिहारी की ज़मानत?”
“आज नहीं हुई।”
“आज ही होगी।” रूप ने दृढ़ता से कहा, “चाहे पाँच हज़ार खर्च हो जाएँ।”

उस समय रात थी, जब पागल-सा बिहारी आकर रामलाल के सामने गिरकर फूट-फूटकर रोने लगा, “अरे सारा गाम देखता रहा। धरमराज को आज कलजुग ने भीतर बन्द करवा दिया! तुम्हारी आँखें न फूट गईं देखने वालो!”
रूप चिल्लाया, “बिहारी, पागल न बन!”
सहसा रामलाल हँसा। वह हास्य सचमुच विकराल था।
फिर अचानक मदन चिल्लाया, “भइया!”
“अरे कोई हकीम-वैद को बुलाओ!” रूप ने पुकारा।
पड़ोसी आ गए। कोलहाल मच उठा।
जावित्री और सोमोती भीतर खड़ी काँप उठीं।
“भइया ऽ ऽ ऽ...” मदन का चीत्कार गूँज उठा।
बिहारी बेहोश हो गया था।
रूप देखता रहा, देखता रहा, फिर अन्धकार में हट गया।

सबेरे लोगों ने देखा, रामलाल की लाश पर कफ़न लपेटा जा रहा था। किशनलाल बुत बना बैठा था। मदन रो रहा था। भीतर पड़ोस की स्त्रियाँ जावित्री और सोमोती के साथ पुक्का फाड़कर रो रही थीं, रूप अर्थी सजा रहा था और मास्टर आलूबुख़ारा उदास-सा बैठा था। केवल बिहारी पागल-सा बक रहा था, “बर्बाद कर लिया तूने...ह ह ह...मार डाला...हो हो...अच्छा किया...वाह...खूब...किया...भइया को ही...”

रूप ने डाँटा, “बिहारी, होश कर...”

उसी समय थाने के सिपाहियों ने आकर बिहारी को पकड़ लिया। सनसनीखिंच गई।

रूप का मुँह स्याह पड़ गया। बदरी सिर पर धूल लगाए पागल-सा खड़ा था।

रूप ने कहा, “बदरी! तू फिर? देख रहा है?”

“देख तो वो रहा है, ऊपर वाला,” बदरी ने कहा, “दुहाई है गाम की। कल रात तो इसने झाड़ू लगा दी मेरे यहाँ...”

सिपाही बिहारी को पकड़ ले चले, किन्तु वह हँस रहा था, शायद पागल हो गया था....

रूप मूर्च्छित होकर बैठा का बैठा रह गया।

सात

रामलाल की चिता जली, बदरी के प्रति लोगों का स्नेह धुआँ बनकर उड़ गया। किशन ने ऐसा कारज किया सातों जात जिमाई कि बदरी की रही-सही साख भी हवा हो गई। किशन के मुख पर ऐसी उदासी थी कि स्वयं रूपनरायन भी देखकर आश्चर्य में पड़ गया। जब वह उससे एकान्त में मिला, उसकी किशन से बात करने की हिम्मत भी नहीं पड़ी। किशन ने उदास आँखें उठाकर कहा, “रूप, फल मिल गया। पाप दुःख ही देता है!” रूप बाहर चला गया क्योंकि नातेदारों की भीड़ जमा हो रही थी। पर रूप का हृदय काँप गया। जब सब काम हो गए किशन ने कहा, “मदन! अब तू सम्भाल! मैं तो चला।”

“कहाँ जाओगे?”

“इस दुनिया में कुछ भी नहीं है।”

अतरौला से पूए खाने आया था पतलून वाला शिवलाल और संग थी चमेली अपनी ननद प्रैम को लिए हुए। रामलाल की मौत के बहाने वह प्रैम को लाई थी, इस उम्मीद में कि शायद मदन से मामला तय हो जाए। स्पष्ट ही साल-भर को तो बात टल ही गई थी, क्योंकि रामलाल मदन का भाई था, पर साल-भर बाद ही सही। बात जो पक्की हो जाए। लेकिन वातावरण ऐसा उदास था कि उसे बात छेड़ने का मौका नहीं मिल रहा था। और शिवलाल था दामाद। दोनों वक्त चकाचक भोजन मिल रहा था, सोमोती की आज्ञा थी। वह पड़ी रहती, भंडार चमेली के हाथ था। सोमोती को सहारा मिला था, इन दिनों उसे आराम की ज़रूरत थी। प्रैम के आने से मदन भी मौके निकालकर सोमोती और रूप की सेवा में उपस्थित दिखाई देने लगा। किशन ने देखा तो एक लपट-सी भीतर ही भीतर सुरसुरा गई। चमेली भी कितनी खिल गई थी। जब ब्याह के गई थी, तब छोटी-सी थी। किशन ने तब देखा भी नहीं था। लेकिन सोमोती को चिन्ता थी रूप की। वह ऐसा उदास रहता कि उसकी कुछ भी समझ में नहीं आता। उसने किशन को बुलाया।

“बुलाया है?” उसने बैठकर पूछा।

ओट से उसने कहा, “तुम्हारे भैया को क्या हो गया है?”

“मुकदमा लग गया है भाभी!” किशन ने धीरे से कहा।

“कैसा मुकदमा?”

“बिहारी को छुड़ाने की कोशिश कर रहे हैं।”

“बिचारा!” उसने कहा, “बेकसूर फँसा है।”

“इसीलिए तो रुपया भी ज़्यादा खरच करना पड़ रहा है!”

रुपया! रुपये का नाम सुनकर सोमोती के कान खड़े हुए। बोली : “सच! कौन कर रहा है?”

“वही रूप और कौन? मेरे पास तो है ही क्या? लेकिन रूप में भलमनसाहत है।”

“कहो तो, कितना लगा होगा?” स्त्री-हृदय ने सतर्क होकर पूछा।

“तीन एक हज़ार तो उठ चुके होंगे। अभी पाँच एक हज़ार उठ ही जाएँगे। तुम जानो आजकल रिश्वत कम है? सिपाही, दीवान, दरोगा, डीएसपी, एसपी और कोरट तो पहले भी थे, और डीसी, मुंशिफ और डॉक्टर और जाने कौन-कौन से बड़े आदमी हैं, मगर नये भी हो गए हैं अब, पंच, सरपंच, एमेले, ऐम्पी, मिनिस्टर। मगर रूप का ही कलेजा है कि इतनी चोट, और वह भी दूसरे के लिए झेल रहा है, खैर! बड़ों से मुलाकात हो रही है, कभी तो काम आएगी ही।”

“अरे आग लगे ऐसी मुलाकात में!” सोमोती को लगा कि सब कुछ उसके देखते-देखते लूटा जा रहा था। वह अपने को मालकिन समझती थी और यहाँ वह चूल्हे और ढोर-डंगर की चौकीदार-भर निकली। बिहारी दस दिन बंद न रहा, तीन महीने पीछे ही छूटा तो क्या बिगड़ गया? यहाँ रोटी न तोड़ी, वहाँ तोड़ ली। नाक का सवाल ही कहाँ रहा! जेल तो हो ही गई! हमदर्दी दिखाना और बात है, मगर मरा वो यहीं मरेगा अब छूटे के भी। रामलाल तो है नहीं अब! और उसे कौन खिलाएगा?

किशन ने फिर कहा, “मुझसे दरोगाजी पूछते थे। इतना माल इस रूप के पास कहाँ से आया जो फूंक रहा है? और इसे छुड़ाने को वह क्यों बर्बाद हो रहा है? इसका तो वह कोई रिश्तेदार भी नहीं। इशारा करता था कि कहाँ बिहारी के ज़रिये चोरी के गहने यही तो नहीं रखता था?”

सोमोती को काटो तो लहू नहीं। भय से मुख विवर्ण हो उठा। बोली, “भइया की सौगंध! तुम नहीं रोकते उन्हें?”

“मैं कैसे रोकूँ?” किशन ने उठते हुए कहा, “तुम कहो।”

“मेरी क्यों मानेंगे वे!”

उसने पैनी आँखों से देखकर कहा, “इत्ती बात तुम्हारी द्यौरानी तो क्योंकर सुनती?”

सोमोती का मन ईर्ष्या और लज्जा से भड़क उठा। कहा, “तो घर तुम्हारा नहीं यह! पुलिस का भी ध्यान नहीं। ये मरे किसी के नहीं पुलिस वाले!”

“बाप के भी नहीं अपने!” उसने सिर हिलाकर कहा।

“कहो मेरे सिर पर हाथ धरकर लाला! तुम उन्हें रोकोगे। घर फूंका जा रहा है, फुंकने दो मगर ऐसा भी क्या चूल्हा जलाना कि रोटी सेंकते हाथ पजर जाएं?”

“देखो।” उसने कहा और चला गया।

रात को चमेली ने खाना परोसा। शिवलाल खीर खा रहा था। चूल्हा चमेली के हाथों, दूध प्रैम के। लेकिन चिन्ता से व्याकुल सोमोती घूँघट किए ओट में आ गई। बोली, “पूछौ ननद जी! तुम्हारे भैया का मुँह क्यों सूखा जाता हैं?”

रूप हँसा, कहा, “पहले लहलहा रहा था?”

शिवलाल भी हँसा।

सोमोती कुछ भी नहीं कह सकी। आधी रात के सन्नाटे में उसकी खाट पर बैठ गई। रूप जाग रहा था।

“अभी तक सोए नहीं?”

“सोया था। तेरी आहट से जग गया।”

सोमोती का मन छोटा हो गया। बोली, “मुझसे जगे? तो मैं जाऊँ?”

“हाँ, सो रह!” उसने नितान्त उपेक्षा से करवट बदलकर कहा। वह आहत-सी लौट आई। पुरुष नींद को प्यार करता है, और अपनी नींद में कोई बँटवारा नहीं चाहता। स्त्री चाहती है कि पुरुष उसका मनोरंजन करे और तब अपनी नींद को अवसर के मुताबिक फिट कर ले। यह संघर्ष सनातन से चला आता है। दिन समाज का है, इसलिए स्त्री चाहती है कि रात उसकी हो। और पुरुष पूछता—मैं दोनों जगह जागूँ, तो सोऊँ कब? स्त्री चाहती है, पति बोले, उसे बहलाए, प्रेम जताए। पुरुष होता है यथार्थवादी। शादी हो गई, ठीक है, सब चलता है। स्त्री चाहती है कि जो रस उसे शादी होते ही मिला था, वह जीवन-भर मिले। लेकिन पुरुष की बुद्धि नये-नये मनोरंजन खोजती है।

जब वह लेटी तो बिहारी साँप-सा नज़र आने लगा। दूसरे दिन किशन से उसने कहा, “तुमने कहा?”

“नहीं।”

“क्यों?”

“उससे झगड़ा कौन मोल ले! मेरा तो खास भाई मर गया, पर मैंने बदरी से क्या बदला लिया? कुछ नहीं। समय का फेर है। कोई थाने में बन्द होते ही मर नहीं जाता। भइया का दिल बहुत ज़्यादा नरम था। तो कोई क्या करे? कतल कर दूँ बदरी का? कानून भी तो चाहिए? बिहारी नहीं छूट सकता। उसने बदरी के घर चोरी की है। रूप कहता है—उसने नहीं की। तो मैं पूछता हूँ, किसने की? इसे क्या पता जो बोलता है?”

वह नहीं समझी। उस समय चमेली कपड़े सुखा रही थी। उसके शरीर पर केवल धोती थी। किशन का मन बुलबुला उठा। उसके हटते ही सन्नाटा छा गया। किशन से उसके बाद

सोमोती ने क्या कहा, यह उसके भीतर घुसा नहीं। उसे लगा, वह व्याकुल हो गया था। सहसा बोला, “भाभी! अब मदन का रिश्ता कर दूँ तो फिर छुट्टी पाऊँ। इस दुनिया मे कुछ रखा नहीं।”

वह मुस्कराई। बोली, “छोटी से कहूँगी।” फिर आत्मीयता जताकर कहा, “उसका कुछ इलाज क्यों नहीं करवाते? घर में बालक बिना रौनक नहीं आता।”

यह कहते हुए उसने एक लम्बी साँस खींची।

किशन लौट गया।

दुपहर ढल गई थी। चमेली भीतर आई तो खाट पर लेटी सोमोती ने कहा, “बाहर कौन आया है?”

“मदन है।”

“प्रैम कहाँ है?”

“ऊपर नाज फटक रही है।”

“मुँह मीठा कराओ तो एक बात कहूँ।”

“कहो तो!” उसने आतुरता से कहा।

“तुम्हारे मन की होगी शायद।”

“कैसे?”

“किशनलाल कहते थे—मदन का सम्बन्ध कर दूँ।”

एक लम्बी साँस लेकर उसने कहा, “मगर प्रैम से करेंगे यह उनने कब कही? मदन को तो गठरी वाले मिलेंगे। हमारे पास क्या है भाभी! तुमसे क्या छिपा है। तुम कहोगी, अपने मरद की बुराई करती है, लेकिन इनसे तो कुछ होता नहीं। और वह है कि बैल-सी बढ़ी जाती है। अभी न हुई कुछ बात तय, तो आगे कि वह लड़की-सी भी नहीं लगेगी; मैं तो कहूँ कोई बाल-बच्चेदार दूजा ही मिल जाए। अपने ऊपर से तो ज़िम्मेदारी हटे। मैं तो आँख रखते थक गई। ऐसी छुटैल का क्या ठिकाना। और इनका हाल यह है कि बैठना, खाना, सोना! भैया का घर क्या मेरा मायका नहीं?”

सोमोती का मन हल्का हुआ। कृतज्ञ भी। बोझ-सा मन पर कि लूटे जा रही है। मगर ज़्यादा टिकाव भी ठीक नहीं लड़की का मायके में जो हो, रुपये तो रूप से ही माँगे जाएँगे, प्रैम की शादी को। यही चमेली आँचल पसार देगी रूप के पाँवों में करना ही पड़ेगा। सोमती खूब समझ रही थी। सोचा, क्यों न सचमुच मदन से पक्की हो जाए प्रैम की? लेन-देन भी शायद कम हो जाए मेल-मुरव्वत में। अब तो रामलाल भी नहीं। मदन तो चक्कर खा ही रहा है। लड़की भी अटकी-सी लगती है उससे। और जावित्री को तो ज़्यादा देर नहीं लगेगी मना लेने में। रही बात किशन की। सो वे रूप के इतने मित्र हैं। ऐसे क्या पैसे का नाम आते ही बिल्कुल आँखें फेर लेंगे? चौबीस घंटे का उठना-बैठना।

सोमोती ने बात टाली, “अभी तो साल-भर कुछ होगा नहीं।”

उसका इशारा रामलाल की मौत की तरफ था।

“साल क्या!” चमेली ने कहा, “हम दो बरस कैसे भी हो, लड़की को अपना पेट काट के रख लेंगे, मगर वे बात तो पक्की कर दें। अरे गोद भरने की कौन कहता है, वे तो हाँ कर दें। मेरी तो दिलजमई जो जाएगी। अँधेरा झेलने को भी तो आते दिन की आसा चाहिए भाभी। वैसे ही कोई कब तक दीपक जला के अपना तेल खतम करता बैठा रहे। गधे के कान में फूँक मारने से कुछ नहीं होता। यों आजकल लड़का खोजना ऐसा समझो जैसे पोले बाँस में पानी डालना, इधर डाला, उधर निकल गया।”

सोमोती ने कहा, “देखो ननद जी! तुम कहो न किशन लाला से।”

“कहूँ कैसे?” वह बोली, “वहाँ तो जावित्री है भाभी! मर्द का दिल पिघलै, औरत का नहीं। यों कहैगी, इत्ते सिक्के इसमें दो, इत्ते उसमें। बात तो फिर ब्यौहार से चलैगी। उस बखत तो मैं समधिन बन जाऊँगी।”

सोमोती ने चमेली की बात में सार देखा। फिर कहा, “तुम ठीक कहती हो ननद जी! यही बात है।” फिर सोचकर कहा, तुम चाहो तो एक काम हो सकै।”

“कैसा?”

“तुम बात करो उससे, मैं जावित्री को किसी बहाने बुला लूँगी और तुम्हें फुर्सत मिल जाएगी। अकेले में पैर पकड़ के रोना उसके। शायद मान जाए। एक बात जरूर है। जो किशनलाल कह देंगे, उसे मदन की मजाल नहीं कि टाल जाए। तुमने प्रैम दिखा तो दी है जावित्री को?”

“हाँ। सो तो प्रैम भी समझदार है। बड़ी इज़्ज़त करी है उसकी। उसने पानी माँगा तो भाग के लोटा माँज के लाई।” उसने कहा, “बाद में तो जावित्री उससे खुश हो गई। मुझसे पूछने लगी—इसके हाथ पीले क्यों नहीं किए? मैंने कहा—लोग तो रुपये बहुत माँगते हैं। तो बोली...”

“क्या बोली?” उसने अधीरता से कहा।

“बोली, हाँ भैन, ज़माना ही ऐसा है।”

“बड़ी चालाक है वो!”

“ऐसी आँख रखै मदन पै, जब वो इधर आवै!” उसने विक्षोभ से कहा, “क्या बताऊँ, कल तो मेरे तन-बदन में आग लग गई। पर क्या करूँ? स्वारथ है। मतलब पै आदमी गधे को बाप बनावै। लहू का घूँट पी के रह गई।”

“क्यों, क्यों?” सोमोती ने कौतूहल से पूछा।”

“एक बार हो जाए ब्याह,” चमेली ने कहा, “फिर तो लड़की इसे उँगलियों पै नचा देगी। खसम को ले अलग न हो गई तो देख लेना। ये रानी बनके चाहे रोटियाँ तोड़ना! वो तो

इससे झाड़ लगवाने को हौसला रखे! पर घुसै तो किसी विधि। तब देखूँगी इसको जो याद न दिलाऊँ कि इसने भी क्या कहा था।"

सोमोती ने पूछा, "क्या कहा था सुसरी ने?"

"अरी भाभी! कल मैंने इसे छत पै देख वैसे ही पूछ लिया—भाभी! मदन कहाँ गए? बोली, कल तो गए ही थे तुम्हारे यहाँ? ऐसी बोली बोली उसने कि मैं तो बस झुलस के रह गई। सँझा को मैं छत पै गई तो मैंने सोचा—चलो मिल आऊँ। मदन रोटी खा रहे थे। ये परोस रही थी। कह रही थी—जानती हो क्या कह रही थी?"

"क्या कह रही थी?" सोमोती ने सुनने के पहले ही कल्पना की कि कुछ बुरी बात होगी। झट जोड़ दिया, "मैं तो जानुँ ये बड़ी काली है दिल की। दूध-पूत तो इसे किसी के घर फूटी आंखों नहीं सुहाते!"

चमेली ने आँखें तरेर के कहा, "भाभी हाय! ये कह रही थी—लाला! तुम्हें तो आज मीठी मैया पूछ रही थी!"

सोमोती जल उठी, "मीठी मैया! तुम्हें कहा! इसके मुँह में कीड़े पड़ेंगे, कीड़े। मैं जानूँ बड़ी चालाक है। घर में दूसरी औरत न आने देगी यह। देवर को देख कै भी वैसे ही चलै, बतरावै, जैसे कोई अपने खसम से भी न करै।"

"तो भाभी!" चमेली ने कहा, "बुरा न मानना, बुरी बात कहती हूँ। दुनिया का नेम है। एक खूँटे से चार बैल बँधे, पर बिजार नहीं बँधे। ब्याह से पहले मर्द बिजार हौवे। जब तक गिरस्ती का जूआ कन्धों पर न आवै तब तक वो अपने को आज़ाद समझै। यह तो लाला की ज़िन्दगी बिगाड़ देगी। बामन-बनिया की जात में देवर का काम भाभी से चलता होय तो न चलै! कुछ भी हो, मैं तो यही सम्बन्ध चाहूँ।"

सोमोती ने कहा, "देखो ननद जी! आज तक नहीं कहा, अब कहूँगी। इसका घमंड तोडूगी। यह बड़ी चमको बनी फिरती है बाँझ! घर में द्यौरानी आवै, बच्चे हों उसके, तब इसकी कदर घटैगी। ये सोचती होगी कि द्यौरानी से पाँव धुलवाऊँगी। प्रैम से इसके हाथों झाड़ू न लगवाई तो कहना। क्या कहा था? मीठी मैया!! आज ही तुम्हारे भैया से बातें करूँगी।"

सोमोती ने रूप से कहा, "अब कुछ बहन के सुख-दुःख की भी सोचोगे कि बिहारी ही को तार के रहोगे? कित्ते हज़ार गए?"

रूप चौंका। बोला, "क्यों?"

"प्रैम का ब्याह करो। मेहमान (दामाद) तो खाऊ महाराज है। बस पतलून क्या पहन ली, समझ लिया, राज जीत लिया।"

"कर दो तय," उसने कहा, "ब्याह हम करेंगे।"

"गठरी चाहिए।"

"दस हज्जार!" रूप ने कहा, "देंगे!"

वह अवाक् रह गई। स्वर धीमा कर दिया कि कहीं चमेली सुन न ले। कहा, "कहाँ से आते हैं?"

"पुराने धरे हैं अभी।" यह कहते हुए उसके चेहरे पर स्याही-सी आ गई।

"तो, मैं किशन लाला से पूछूँ?"

रूप को झटका लगा। उसके वे ही रुपये जाएँ किशन के पास! नामुमकिन! सोमोती कहती रही, "पड़ोस की बात है, लड़की सामने रहेगी। जावित्री के तो कोई हुआ ही नहीं, लड़की की, भगवान ने चाहा, गोद भरी कि एकदम घर की मालकिन बन जाएगी; जावित्री क्या कर सकै। रोज़ की उठक-बैठक, लाला भी मुँह नहीं फाड़ पाएँगे।"

किन्तु रूप ने सोचा। किशन जानता है कि रुपया शिवलाल के पास नहीं, रूप के पास है। उससे यह कैसे छिपेगा कि रूप के पास कुछ नहीं। उसने कहा, "अजी वो एक लुच्चा है। नया मालिक हुआ है। वो न मानैगा।"

सोमोती को यह सब क्या पता था। बोली, "मान लेंगे।"

"कैसे?" वह चौंका।

"अभी तक भैया थे बड़े। अब घर में अकेले मदन और जावित्री का रहना उन्हें क्या पसन्द आएगा?"

जावित्री की तीखी आँखें रूप के सामने डोल गईं। जेठ बना था, कभी देखा नहीं था अच्छी तरह, मगर उन आँखों की झलक पाई थी, जावित्री ने दिखाई थीं। समधिन बनेगी तो नया रिश्ता कायम होगा। मज़ाक भी होंगे। बोला, "है ठीक! मगर पैसे की माया पैसे में है।"

चमेली की पगचाप सुनाई दी। आवाज़ आई, "भइया!"

"क्या है?" उसने कहा।

"ये पंडित जी आए हैं।"

आँगन में देखा। एक ब्राह्मण तिलक लगाए बैठा था। उसके मुख पर चमक थी, ऐसी कि रूप दब गया।

चमेली ने कहा, "प्रैम की पत्री दिखाई। कहते हैं, साल-भर में ब्याह हो जाएगा।"

वह हर्ष से उमग रही थी।

जावित्री छत पर थी। धीरे से फुसफुसाई, "क्या है जेठी!"

"आओ!" सोमोती ने कहा, "बड़े पंडित हैं। तुम भी दिखा लो हाथ।"

जावित्री तुरन्त उतर आयी। सोमोती ने धीरे से चमेली से कहा, "बाहर से जा और किशन लाला से बतरा के पत्री ले आ मदन की। इस बखत यह यहीं रहेगी। मदन भी बाहर गया है अभी यहीं से।"

चमेली चुपचाप चली गई। जावित्री, प्रैम और सोमोती के साथ रूप पंडित के सामने बैठा रहा। प्रैम मुँह खोले, दोनों औरतें मुँह अधखुले ढके। रूप आगे था एक किनारे। पंडित देखने लगा।

जब ज्योतिषी आता है तब लोगों में उत्सुकता एक नया रंग ले आती है। तरह-तरह के सवाल होते हैं। पंडित जब हिसाब लगाता है, तब भी लोगों को देर का ध्यान नहीं रहता।

चमेली को द्वार खुला मिला। भीतर जाकर देखा, किशन नीचे नहीं था। सोचा, ऊपर होंगे। ऊपर चढ़ गई। किशन वहीं था।

चमेली को डर था। कहीं ज़ोर से बोलने की आहट नीचे उधर आँगन में बैठी जावित्री को न मिल जाए।

किशन ने खाट पर बैठे-बैठे पूछा, “कैसे आई चमेली?”

चमेली हठात् नहीं कह सकी। भूमिका सोचने लगी। बोली, “भाभी कहाँ है?”

”अभी तो नीचे गई है। वहाँ तू भी तो खड़ी थी?”

वह पकड़ी गई। चेहरा शर्म से लाल हो गया। किशन ने कहा, “अब बता।” यह कह उसने हाथ पकड़ के खाट की ओर खींचते हुए कहा, “अकेले में कुछ कहना है, जो जावित्री के सामने नहीं कहना था? बैठ जा और बता, क्या बात है?”

वह इस ढंग से बात के शुरू होने से प्रसन्न हुई। बैठ गई। उसे यह ध्यान नहीं रहा कि वह एक खाट पर बैठ गई थी।

बोली, “एक बात कहनी है।”

“बोल! जो चाहे सो कह।”

“मान जाओगे?”

“बात तो बता!”

“मदन का प्रैम से सम्बन्ध कर दो।”

उसे यह आशा नहीं थी। भौंहें जुड़ गईं। बोला, “ऐसे कैसे कह दूँ?” वह उठा और उसने मोखे से झाँक के देखा। नीचे सब तन्मय बैठे थे। मुड़कर बोला, “बात...”

उसकी ऊँची आवाज़ सुनकर चमेली ने धीरे से टोका, “हाय! ऐसे न बोलो, भाभी को पता चल जाएगा, मैं यहां हूँ। धीरे बोलो!”

किशन वहीं जा बैठा और बोला, “मदन की शादी में तो काफी रुपया लगेगा। मेरे पास क्या है? ऐसा कोई मिले जो मेरा भी खर्च झेल ले।”

चमेली का मुँह सूख गया। बोली, “मैं तो बड़ी आस से आई थी कि डूबते को तिनके का सहारा मिलेगा?”

उसकी आँखों में आँसू भर आए। किशन ने उसके आँसू पोंछकर कहा, “हिरास क्यों होती है? मैं क्या मना करता हूँ? तू ही बता, मैं क्या धन का भूखा हूँ? मदन निखट्टू है, उसका घर बस जाए, यही क्या कम अहसान है? फिर तुम भी घर के हो! बहू आएगी तो शायद घर में बालक भी हो। एक जीने का सहारा हो जाए। मगर जावित्री तो नहीं मानेगी। मेरी तरफ से बरात का खर्च झेल लो, मुझे कौड़ी न दो। उल्टे हजार-आठ सौ का बहू को

गहना चढ़ा दूँगा। मैं क्या जानता नहीं कि वहाँ जो कुछ भी खर्च होगा रूप का होगा। रूप और मैं क्या अलग हैं? उसका खरच कराके क्या मेरी आत्मा को शांति मिलैगी?

यह कहते हुए उसने चमेली का हाथ पकड़ लिया। चमेली की आशा लहलहा उठी। उसने कहा, "तुमने मरते को जिला दिया। पक्का वचन है? फिर मदन की पत्री दे दो।"

"अभी दिखाएगी पंडित को?"

"हाँ।"

"जावित्री न पूछेगी कि तुम पै कहाँ से आ गई? पहले बात कायदे से छिड़ने दे। फिर पक्की होगी।"

"वो क्या तुम्हारी बात काट लेगी?"

"पर ये तो कहेगी कि तुम्हें कैसे मिली?"

"कह दूँगी, ले आई।"

"कब? जब वो न थी? सोचेगी नहीं कुछ और? मन में तो सोचेगी ही। बदनामी बुरी, बदी अच्छी। है न?"

चमेली को तब ध्यान आया, वह अकेली छिपके आई थी। बगल के घर में पति था, आँगन में भाभी, भाई, ननद थी, और किशन की बहू थी। वह वहाँ इकली खाट पर हाथ में हाथ दिये बैठी थी। एकदम शर्म से उठी और बोली, "ठीक है।"

किशन ने उसे बिठाकर कहा, "सुन तो सही, चली जाइयो। ऐसा भी क्या मतलबीपन कि बात पूरी होते ही चल दी। हमने तेरी बात मान ली तो चल पड़ी?"

उसे मुरव्वत में बैठना पड़ा। परन्तु बोलती क्या? किशन की आँखें अब सुलगने लगी थीं।

घबराकर बोली, "कोई देख न ले?"

"कौन आता है?" किशन ने कहा और तब उसका हाथ उसके हाथ पर कस गया।

वह बोली, "छोड़..."

किशन ने कहा, "धीरे बोल, कोई सुन लेगा तो कहीं की न रहेगी। तू आई है, मैं नहीं गया..."

कुछ देर बाद जब चमेली चलने लगी तो किशन ने कहा, "बात चला दे, पक्की समझ।"

चमेली का चेहरा सूख-सा गया था। उसकी इच्छा हो रही थी कि आज मायके में ही घूँघट काढ़ ले। वह घर गई तो सीधी रसोई में घुस गई। उस समय जावित्री, प्रैम और सोमोती बतरा रही थीं। सोमोती ने जावित्री को बातों में लगा रखा था। प्रैम उसका हर हुकम उठा रही थीं। जावित्री भी उसकी दासता का आनन्द ले रही थी। आँगन में अकेला रूप पंडित के आगे बैठा था।

पंडित ने पत्री पर से निगाह उठाकर कहा, "समय तेरा ठीक ही है।"

उस स्वर में एक अविश्वास था। रूप डर गया। बोला, “क्यों महाराज! साफ-साफ बताओ। दच्छिना की चिन्ता मत करो। बुरा हो तो बुरा कहो।”

पंडित ने फिर कहा, “पाप से बच। बामन की बात याद रखना। मैं लोभी नहीं। आदमी को ग्रह नहीं डुबाते, भाग्य नहीं डुबाता, डुबाते हैं उसके पाप। समझा? पैसा कमाने की बात और है, मैं भी सेठों की मोटरों में घूमता। लेकिन गुरु ने कहा था—कि बेटा! ज्योतिष से सिर्फ पेट भरना, नाजायज़ रुपया न कमाना। यह विद्या ऋषियों-मुनियों की है। इसमें त्रिकाल का ज्ञान मिलता है। अपना धरम ब्राह्मण ने छोड़ दिया, इसीलिए उसकी बात भी नहीं फलती। आदमी के हाथों में परमात्मा ने भाग्य लिखा है कि रोज़ वो अपनी आँखों से अपनी हथेलियाँ देख सके। इसलिए उसे विवेक दिया है; वही अच्छे-बुरे की परख करता है। तेरे सन्तान-योग पड़ता है, मगर तेरे बच्चे जन्म लेकर मर जाते हैं?”

रूप का मन जैसे कीड़ा बन गया, जो किसी छिपकली के मुँह में दबा छटपटाने लगा। बोला, “हाँ महाराज!”

“तो पाप छोड़ दे। जो धन पाप से कमाया है, उसे दुनिया के लिए, धरम के लिए खरच कर!” पंडित के स्वर ने रूप की कल्पना को भी आतंकित कर दिया। उस समय ठाकुर के पचास हज़ार शेषनाग की तरह खड़े हो गए और अपने हज़ारों सिरों से विष उगलने लगे। सारी पृथ्वी श्मशान की तरह जल उठी, जिसमें उसके बच्चों की लाशें दीखने लगीं और एक-एक पाप याद आने लगा और तब उसने जो नरकयातना के चित्र देखे थे, वे उसके सामने आने लगे, अब उसे यमदूत आरों से काट रहे थे; अब वह जलते तेल के कढ़ाहों में पकाया जा रहा है; अब उसे भालों से गोदा जा रहा है...

एकदम देही से पसीना चुचा आया और आँखों के नीचे अँधेरा छा गया। रूप बेहोश हो गया। घर में कोलाहल मच उठा। किन्तु सोमोती नहीं उठ सकी। उसके दर्द चलने लगे थे। चमेली को भैया की सेवा, भाभी की सेवा, पति को चकानचक्क भोजन देने की चिन्ता, प्रेम का ब्याह ऐसे नीच घर में कराए या नहीं यह चिन्ता, और एक अपनी ग्लानि, वह कुछ भी सोच नहीं पाई। पर फिर ध्यान आया—प्रेम का तो आदमी संग रहैगा मदन। फिर आगे प्रेम जाने। मैं कहाँ-कहाँ क्या करूँगी? और बनिया-बामनों में इसका क्या दोस। बहुतों में चलता है। फिर ध्यान आया! अब लौटने से भी क्या लाभ? अब तो जो होना था सो हो लिया। जब मर्द ही काबिल नहीं, और उसे ही इन्तज़ाम करना था, तो वह क्या करे? जैसा जो हुआ, सो हुआ। यह ब्याह हो जाए, फिर तो समधाना कायम होने पर वह इधर आएगी भी क्यों?

दाई ने लड़का बताया। सोमोती को लेटे-लेटे ही गर्व हुआ और नखरे बढ़ गए। जावित्री के मन में शूल-सा चुभ गया। नावगंतुक ‘क्वां-क्वां’ करके पृथ्वी पर अपनी सत्ता का उद्घोष करने लगा, जिसे सुन-सुनकर माँ का लहू दूध बनने लगा। मंगलहारी ने बाहर बैलों के सींग गेरू से चिपड़े और गंडा चढ़ाया और इनाम की आशा में एक गीत भी गुनगुनाया। शिवलाल ने सुना तो मस्त होकर पैर फैला दिए, कि अभी कुछ दिन और चकानचक्क

उड़ेगी। प्रैम तो सोमोती की सेवा में ही जुट गई। नया बालक देखकर उसे एक आश्चर्यजनक आनन्द हो रहा था—ऐसा जो वह समझ नहीं पा रही थी।

केवल रूप था जो ऊपर खाट पर अँधेरे में उदास बैठा था।

नीचे से जावित्री ने आवाज़ दी, “हाय बच्चे को तो दिखा दो उसके बाप को!”

उस स्वर में एक विष था। सोमोती ने झट बच्चे को छाती से लगाकर कहा, “अभी से!”

जावित्री ने सबको व्यस्त देखा। आज उसे बहाना था रात में यहीं रहने का। अन्धकार में ऊपर चढ़ गई। रूप बैठा था, हाथों पर सिर धरकर कोठे में। किवाड़ अधभिड़ा था। जावित्री धीरे से घुसी तो उसने माचिस जलाकर बीड़ी सुलगाते हुए कहा, “कौन?”

माचिस की तीली की चमक में बदरी वाली कौंधनी जावित्री की धोती पर झलमल कर उठी। आज उसने उसे चाव से पहना था। वह झलमल एक क्षण हुई किन्तु दरवाज़े के खुले भाग में से उसे आँगन के पार छत पर खाट पर उठंगे किशन की तेज़ आँखों ने देखा। और कौंधनी!! किसकी होगी! प्रैम के पास नहीं, चमेली के पास नहीं। सोमोती की नहीं हो सकती! फिर?

पुरुष कितना भी घृणित क्यों न हो, फिर भी वह अपनी स्त्री से एक उच्च आदर्श की आशा करता है। प्रतिहिंसा से व्याकुल-सा वह उठ खड़ा हुआ। आज तक रूप के विरुद्ध जो घुटन थी वह साकार हो गई। वह अँधेरे में ही मुंडेर पर चढ़ गया।

रूप जावित्री को देखकर चौंक उठा।

“तू!” उसने कहा।

जावित्री ने फूत्कार किया, “डर गए?”

वह रूप की खाट पर जा बैठी। रूप को लगा कि पाप फिर आ गया था, अपनी बाँहें खोलकर। उसने सरककर कहा, “क्यों आई?”

वह सरकी। रूप का हाथ कौंधनी से लगा, उसे हटाना चाहता था।

“ठोस सोने की है।” उसने कहा, “तुम ले लो।”

उसके स्वर में एक भयानकता थी।

रूप के हाथों में कौंधनी झूल उठी। कितना सोना होगा?

जावित्री ने कहा, “वही है जो बिहारी ने चुरा के हमारे नौहरे में छिपाई थी।”

तो बिहारी सचमुच चोर था! रूप ने सोचा। फिर सब ही तो पापी हैं। पंडित बकता था। इस तरह डराकर दो रुपये ज़्यादा ले गया। रामलाल जैसे अच्छे आदमी यों ही मर जाते हैं! लेकिन अब तक तो बिहारी को भी अच्छा समझा था। समझने को तो दुनिया उसे और किशन को भी भला समझती है। सब गन्दे हैं, अगर रोज़ ऊपर से न नहाया जाए तो कोई पास भी नहीं बैठाया जा सकता।

जावित्री ने उसका हाथ पकड़ लिया। रूप का संयम टूट गया।

किशन जब पहुँचा, द्वार बन्द था। उसका शरीर क्रोध से फटने लगा। सारा शरीर पसीने से भीग गया।

जावित्री निकलकर बाहर चली। नीचे से कोई लालटेन लेकर आता लगा। जावित्री सर्र से उतर गई। किशन डौरी की ओट में हो गया। लालटेन लेकर प्रैम आई थी। उसने कोठे पर जाकर रूप से कहा, “चलो नीचे। भाभी बुलाती हैं बच्चा दिखाने। एक झलक देख तो लो!”

वह हँसी। रूप ने कहा, “चल।”

किशन ने दाँत पीसे।

जब रूप और प्रैम नीचे चले गए, उसने कोठे में घुसकर देखा। कौंधनी अभी तक खाट पर धरी थी। उसने उठाकर जेब में रख ली।

नीचे रूप का रंग उड़ा हुआ था। ज्योंही चमेली ने उसके हाथ पर बच्चा रखा, बच्चे की गरदन हिल गई।

दाई चिल्लाई, “अरे सम्भाल के।”

रूप का हाथ काँप गया। पाप का आतंक पहले ही था। दाई ने चीत्कार किया, “हाय बेहोश हो गया बच्चा!”

चमेली ने बच्चा छीन लिया। सोमोती खाट पर बैठ गई। रूप दोनों हाथों से मुँह छिपाए ऊपर भागा। पाप! क्या उसका पाप इत्ता बढ़ गया था? कोलाहल सुनकर शिवलाल भी जाग गया और भीतर भाग चला। उसने समझा, चोर है। रूप को ऊपर जाते देख वह समझा कि वह भागा जा रहा है। स्त्रियाँ बच्चे को होश में लाने लगी थीं। किसी को भी बाहर का ध्यान नहीं था। आहट पाकर किशन सन्नद्ध हो गया। अँधेरे में उसका हाथ किसी चीज़ से टकराया। चाकू था। उसने उसे काँपते हाथ से उठा लिया।

सहसा अँधेरे में रूप भयानक स्वर से चिल्लाया। पीछे आता शिवलाल टूटकर उस पर गिरा। उसने उसे ज़ोर से दबाया, मानो चोर को पकड़ लिया हो। उस धक्के से दोनों गिरे और किशन बाहर निकल गया। वह लोमहर्षक स्वर सुनकर स्त्रियाँ नीचे चिल्लाने लगीं। प्रैम सबसे पहले लालटैन लेकर ऊपर भागी। पीछे से चमेली भी। डगमगाते पाँवों से सोमोती भी चल दी। दाई रोकती ही रह गई पर वह नहीं मानी। जब वह ऊपर हाथों से सिड्डियाँ पकड़ती चढ़कर कोठे में पहुँची, उसने देखा, प्रैम और चमेली का नयन फट गए थे।

“स्साला...” कहकर शिवलाल उठ खड़ा हुआ। सोमोती आगे बढ़ी और ज्यों ही उसने लालटैन आगे की कि रोशनी खून पर पड़ी। उसने देखा और एक अजीब स्वर उसके मुँह से निकला, “हत्यारे...”

रूप मर चुका था। चाकू खून में भीगा पड़ा था। सीने में ज़ख्म लगा था।

वह बेहोश होकर गिर पड़ी। चमेली चिल्लाई, “भइया...”

प्रैम को लगा, अँधेरा छा गया था। शिवलाल वहीं सिर थामकर बैठ गया।

खून की लीक बहने लगी थी।

"सुनते हो!" जावित्री ने किशन को हिलाते हुए कहा, "जेठ जी का कतल हो गया।"

"ऐं!" किशन ने ऐसे कहा, जैसे वह इस पृथ्वी पर नहीं था।

जावित्री समझी कि नींद टूटी नहीं। उसे क्या पता था कि उसका पति उसका पाप जानता था। उसने फिर कहा, "जेठ जी का कतल हो गया। बहनोई ने उन्हें मार डाल..."

किशनलाल की समझ में नहीं आया। बोला, "ऐं...किसने किसे मार डाला"

उसका स्वर शराबी की तरह खिंचा-खिंचा था।

"अरे शिवलाल ने रूप को मार डाला।" उसने आतुरता से कहा।

किशनलाल को जैसे बिजली छू गई। उठ बैठा और हाथ पकड़कर कहा, "सच!"

"सुनते नहीं, हा-हा मच रही है।"

वह उठा। धीरे से। छत से झाँका। रोंगटे खड़े हो गए।

"बहुत प्यारा दोस्त था!" जावित्री ने कहा—और वह रो पड़ी। उसके आँसुओं को देखकर किशन को पैशाचिक आह्लाद हुआ। बोला, "मेरा तो हाथ कट गया। क्यों मारा उसने?"

"आग लगे उसमें!" जावित्री ने रोते हुए कहा।

"तू जा, भाभी के पास!" उसने कहा, "मैं बाहर चलता हूँ। अब उस घर का मेरे सिवाय है भी कौन?"

यह कहते समय उसकी आँखें जैसे ज़हर में डूब गईं।

जब किशन पहुँचा, सारा मुहल्ला इकट्ठा था। पुलिस ने शिवलाल को पकड़ था। लोग गालियाँ देते थे। जिसके जो मन में आ रहा था, बक रहा था।

"खास साले को मारा? क्या मिला इसे? आप बच जाएगा? रुपया नहीं था, तो चोरी करने चला था? सोचा था, कोई नहीं देखेगा? अरे वो ऊपर वाला तो देख रहा था?" "अब अपनी भी रांड छोड़ेगा और क्या?" "और बहन बैठी है घोड़ी-सी क्वांरी।"

और चमेली मुँह ढँके रो रही थी। और सोमोती डकरा-डकरा के टूट रही थी, "अरे बैरी! तुझे इसलिए दूध पिलाया था सर्पोटे? तैने आग लगा के मुझे बरबाद कर दिया! तुझे दया न आई, तेरा खून पी लूँ..." उसका वेश भयानक हो गया था। भयानक थी मुद्रा। फिर भी देखने वाले उसे देखकर दहल उठते थे। प्रैम एक कोने में बैठी सुबक उठती थी। शिवलाल के साथ कोई न था। वह चिल्लाया, "मैंने खून नहीं किया..."

किशनलाल ने जावित्री से कहा, "चमेली और प्रैम को तू घर छोड़ के सोमोती के पास रहा। मैं थाने जाता हूँ। इनको देख--देख के सोमोती का गुस्सा बढ़ैगा।"

जावित्री ने कहा, "चमेली, चल।"

"नहीं। मैं तो यहीं मरूँगी। मैं तो कहीं की न रही।" वह रोती जाती थी, बोलती जाती थी।

“ल्हास तो थाने में जाएगी।”

न जाने कैसे सोमोती ने सुन लिया। फिर डकराई, “हाय! अभागे! तू अच्छा जन्मा! आज ही बाप को खा गया? ठहर हत्यारे! अम्मा को तैने राँड बना दिया। आज तेरा गला घोंट के मानूँगी घर घालने।” वह भीतर भागी, “बाप की मिट्टी भी बिगड़वा दी। हाय, वे बोटी-बोटी काट देंगे अस्पताल में...”

लोग चिल्लाए, “पकड़ो, पकड़ो...”

पीछे दौड़े...आतंक से चमेली और प्रैम भी भागीं, जावित्री भी...

दाई बच्चे को लिए खड़ी थी।

“ला मुझे दे, “सोमोती चिल्लाई, “इसका घोंट दूं गला...”

बूढ़ी दाई मुस्करा दी। उसने कहा, “ले घोंट दे...”

लोग पुकारे...“हाँ, हाँ, क्या करती है...”

परन्तु दाई हँस दी। उसने लालटैन के उजाले में बच्चे का मुँह करके कहा, “भूखा है, दूध पिला दे...”

सोमोती ने बच्चे को पकड़ लिया। उसका मुख देखा। धार-धार आँसू आँखों से गिरने लगे। हत्या के लिए उठे हुए हाथों ने उस नन्हे बच्चे को छाती से चिपका लिया।

लोग चिल्लाए, “जय माता की!”

बूढ़ी फिर मुस्करा दी। तूफान एक कली के हलके स्पर्श से चुप हो गया था।

सोमोती छाती खोलकर सबके सामने दूध पिलाने लगी। फिर जैसे ध्यान आ गया। कहीं नज़र न लग जाए बच्चे को, झट पीठ फेर ली। औ देखा। चमेली और प्रैम को देखा तो डर से चिल्ला उठी, “निकाल दो, इन डायनों को निकाल दो, कहीं मेरे लाल को न खा जाएँ...”

लोगों में दोनों को बाहर कर दिया। अपमान और दु:ख से वे रोने लगीं। जावित्री उन्हें अपने साथ ले आई।

थाने से लाश अस्पताल गई। शहर मदन साथ गया। कत्ल साफ था। पुलिस केस बना। किशन ने काफी दौड़-धूप दिखाई।

चमेली ने पूछा, “कुछ हुआ?”

उसने कहा, “देखो, कोशिश में तो लगा ही हूँ। रिश्वत माँगते हैं सब! जुटाऊँगा!” उसने गम्भीर स्वर से कहा।

और जब सोमोती के पास गया तो बोला, “आगे का ध्यान करो। सब काम मैं कर लूँगा। रूप मेरा भाई था।” यह कह उसने आँखें पोंछ लीं, “पर इस बच्चे के लिए पत्थर कर लो हिया।”

“उन्हें मेरे घर में न लाना।” सोमोती ने चमेली और प्रैम के लिए कहा।

“नहीं आएँगी। बस!”

“प्रैम से मदन का सम्बन्ध न करना।”

“किस मुँह से करूँगा, ऐसे की बहन से? पर उनका करूँ क्या?”
“निकाल दो। दर-दर की ठोकरें खाएँगी।”
“तुम्हें क्या मिलेगा? बदनामी किसकी होगी?”
“वो मेरे बच्चे को खा जाएँगी।” सोमोती ने रोते हुए कहा।

तेरही हुई चमेली और प्रेम दोनों रोतीं, घर में छिपी रहतीं। जावित्री बड़ी मुश्किल से कुछ खिला पाती। मदन का इश्क हवा हो गया।

जब भीड़ चली गई तब किशन ने सोमोती से कहा, “अब जो हुआ वो भाग्य का खेल था। सिवाय परमात्मा के कोई दोषी नहीं, तुम चाहो तो गवाही ढीलीं देके अपने नन्दोई को भले ही बचा लो, और तो उसे फाँसी से बचा नहीं सकता।”

किसलिए बचा लूँ? इस बच्चे का गला कटवाने को?”

“फिर चक्की है, दुकान है, खेत है। देख लोगी?”

सोमोती ने पुरुष की तरह आँखें उठाकर कहा, “खेत पर मंगल रहेगा, चक्की के लिए मुझे लाला मदन को दे दो।”

“और दुकान?”

“दुकान पै मैं बैठूँगी।”

किशन को लगा वह पहाड़ से टकरा गया था। उस स्त्री के स्वर में अखंड विश्वास था। बोली, “लाला! अब मैं ही इसकी माँ और मैं ही इसका बाप हूँ। जैसा कुछ वो इसके लिए छोड़कर जाते, मैं वैसा ही छोड़कर जाऊँगी।” फिर कहा, “मदन को दे दोगे? तुम्हारा सहारा रहे तो मैं दुनिया जीत लूँगी।”

“लोग हँसेंगे!” किशन ने कहा, “सोच लो!”

“खाने को तो कोई न दे जाएगा?”

“तो मैं शहर जाऊँगा कल।”

“क्यों?”

“कोरट से कह दूँ। शिवलाल छूट न जाए।”

“तुम्हें सौगन्ध है, दया न करना।”

“फिर चमेली और प्रेम का क्या होगा?”

“मुझे मतलब?”

किशन लौट आया।

जावित्री ने पूछा, “क्या कहती है?”

“तू जाकर समझा। चमेली! तू भी जा!”

“मैं जाऊँ?” उसने काँपकर पूछा। भविष्य की भयानकता ने उसके आत्म-सम्मान को तोड़ दिया था। फिर भी कहा, “करने वाला कर गया, पर मैं मुँह दिखाने लायक नहीं रही।

और मेरे गले में एक फाँसी और छोड़ गया।" उसने किशनलाल के पाँव पकड़कर रोते हुए कहा, "इस अभागिन को अपने घर में जगह दे दो, मैं तो मर ही गई। तुम्हारे बर्तन मल-मलकर दिन काट लूँगी।"

किशनलाल ने कहा, "पागल न बन! उससे लोग समझेंगे कि मैंने ही खून कराया था। कल मेरे साथ दोनों चलना और तुम्हारी शिवलाल से भेंट कराऊँगा। फिर तय करेंगे। तैने रोटी खा ली?"

जावित्री ने कहा, "नहीं।"

"तो जो, खा ले।" उसका अधिकारपूर्ण स्वर सुनकर वह रसोई में चली गई।

जावित्री ने कहा, "सचमुच? लौटकर क्या इन्हें रखोगे? मदन लाल से प्रेम का ब्याह होगा?"

"जैसा तू कहै।" किशनलाल ने कहा।

"आग लगाओ।" उसने कहा, "हमारा ही घर है? सारा गाँव थूक रहा है। आलूबुख़ारा तक बुराई करै जो किसी के लेने-देने में नहीं।"

"तुझे कैसे पता?"

"बदरी तो कहै—हो न हो—तुम्हारा नाम लेके कहै—इसमें उसकी कोई चाल ज़रूर होगी।"

"स्साला!" किशनलाल ने कहा, "खाल खिंचवा लूँगा उसकी। भूला नहीं हूँ बेटे को! बखत आने दे!"

चमेली हाथ धोके आ गई।

"खा भी आई?" किशनलाल ने पूछा।

रोने लगी।

"अच्छा, रो मत। तू जा इसे ले जा। पहले इसे बाहर टिका के बातें करके देख। कैसे भी हो, भले ही देर हो जाए, यह काम तो करना ही है।"

जावित्री ने भी कहा, "पर बहुत देर कैसे करूँगी मैं! लाला की कमीज़ में बटन टाँकने हैं।"

"मैं टाँक दूँगी!" प्रेम ने भीतर के कोठे से कहा।

जावित्री चमेली को लेकर चली गई। किशनलाल ने दरवाज़ा बन्द कर दिया। ऊपर प्रेम अकेली थी। जब चमेली नीचे उतरी तो उसे ध्यान आया। परन्तु यह बात अब गौण थी। शायद इसी नाते सम्बन्ध हो जाए। भविष्य बिल्कुल अँधेरा था।

प्रेम बटन टाँकने लगी।

किशनलाल ने आकर कहा, "मेरी में भी टाँक देगी?"

प्रेम ने होने वाले सम्बन्ध की दूर की आशा में माथे पर घूँघट काढ़कर धीरे से कहा, "दे दो।" वह वहीं खाट पर लेट गया।

उसने कहा, “तेरे भाई को सूझी क्या?”

अबोध-सी आँखें उठा के उसने कहा, “मुझे तो भरोसा ही नहीं होता कि यह सब मैं सचमुच देख-सुन रही हूँ। क्या था, क्या हो गया।”

“मदन तुझसे बोलता है?”

“नहीं।”

“नाराज़ है?”

“पता नहीं।”

“हत्यारे की बहन! नाम तो बुरा है ही।”

“सूई प्रैम की उँगली में चुभ गई। खून आ गया। किशन ने झट उँगली दबाकर कहा, “लग गई?”

“यहाँ नहीं, मन में लगी।” उसने कहा।

“कल चलेगी?” किशन ने बात टाली, “भैया से मिल आना!”

“उससे क्या होगा?”

“मैं तो तुझे इसी घर में रखना चाहता हूँ।”

उसने झुककर किशन के पाँव छू लिए।

“लेकिन मदन गधा है, वह माने तब न?” किशनलाल ने कहा, “जावित्री तो तुझसे खुश है?”

“लगती तो है।” उसने दबे स्वर से कहा।

“कितनी भोली है तू!”

इतने दिन बाद इतने स्नेह का स्वर सुनकर वह रोने लगी। किशनलाल ने उसका सिर अपने सीने में छिपा लिया।

“रो मत! तू बड़ी दुखियारी है,” उसने उसके सिर पर हाथ फिराते हुए कहा। वह नहीं जान पाई कि उसका मुँह खुल गया था। वह कहता रहा, “कोई सहारा नहीं। क्यों री? तू यहाँ से जाएगी तो कहाँ रहेगी?”

“मुझे मत निकालो!” प्रैम ने उसको बाँहों में पकड़कर कहा, “कहीं ठौर नहीं है।”

किशन ने उसे भुजाओं में बाँध लिया, कहा, “डर मत! मैं तेरे साथ हूँ।”

प्रैम का सिर उसके कन्धे पर टिक गया। किशन के गर्म श्वास उसके कपोलों पर बज उठे। उसने आँखें मूँद लीं।

जब चमेली लौटी तब वह फफककर रो उठी। जावित्री के हज़ार कहने पर भी सोमोती तैयार नहीं हुई। लेकिन प्रैम ने एकान्त में उसके कन्धे पर हाथ रखकर कहा, भाभी। रो मत! रोना तो ज़िन्दगी-भर है। पर भगवान ने चाहा तो सहारा लगा ही समझ!”

वह चौंकी। पूछा, “कैसे?”

“यह घर तो है ही। मैं यही की बहू बनूँगी।”

उसने विस्मय से कहा, "कैसे पता? जावित्री नहीं मानेगी।"

"वह होती कौन है?" उसने दृढ़ता से कहा, "जेठ जी ने मुझसे कहा है।"

कल तक की लड़की आज एक औरत की तरह बोल रही थी। चमेली ने देखा, प्रैम का रूप एक शस्त्र था।

धीरे से कहा, "तेरा ही सहारा है।"

केस सेशन में चला गया। अब कोई आशा नहीं रही। किशनलाल ने सोमोती से कहा, "दुकान पर बैठती हो। लोग क्या कहते हैं?"

सोमोती ने कहा, "कहें। मैं नहीं झेंपती। सब कहते हैं—न करै, तो करै क्या?"

"गाँवों में शोहरत हो गई है।"

"तो लाला, करूँ भी क्या?"

"और इन दो को अब ज़हर तो दे दो।"

"किन्हें?"

"चमेली और प्रैम को!"

"मैं तो दोनों को मरा समझ चुकी। तुम्हें देना है, दे दो।"

"मैं कैसे बज्जर बन जाऊँ। मुझसे किसी को बर्बाद नही किया जाता। मैं तो परमात्मा को मानता हूँ। वह आप दण्ड देता है।"

"किसकी कहते हो?" उसने चौंककर पूछा।

"तुम्हारी।"

"क्या?" स्वर में विष था।

"तुम्हारी खातिर सचाई छिपानी पड़ी। लेकिन अब मैं बेकसूरों को नहीं मार सकता।"

वह उत्सुकता से झुक गई, "मेरी खातिर?"

"हाँ, तुम्हारी यानी तुम्हारे पति की खातिर। रूप की खातिर! लेकिन जो मेरे साथ हुआ है उसका क्या इलाज है? मेरे घाव को कौन भरेगा?"

"मैं भरूँगी लाला! तुमने उन्हें कुछ रुपया दिया था क्या? आखिर पिटारे के बाहर बिल्ली आ ही गई?"

"तुम भी कहो। पर वो मेरे दिल का टुकड़ा मेरे दिल को काट के फेंक गया।"

"क्या बकते हो!" वह चिल्ला उठी।

"होश में रहो!" उसने दृढ़ता से कहा, "जानती हो, शिवलाल ने रूप को क्यों मारा?"

"हत्यारा ठहरा।"

"बेकार बात मत करो। कोई किसी को यों ही नहीं मारता। खून आदमी गुस्से से पागल होकर करता है। बता दूँ? जी कड़ा कर लो। जिसे देवता समझी हो, उसके बारे में ही सुनने को भी तैयार हो जाओ।"

वह आतंकित-सी उसका मुँह देख उठी।

उसने कहा, “शिवलाल को शक हो गया था कि उस रात की हलचल में जब सब काम में लगे थे, रूप उसकी बहन प्रैम की इज़्ज़त लूट रहा था।”

“झूठ!” वह चिल्ला उठी, “बिलकुल झूठ! तुम ऐसा करते हो? तुम्हें सरम नहीं आती? मरे पै दोस लगाते हो? तुम्हें कैसे पता?”

“मैं जानता था। मगर पूरी बात सुनने के लिए दिल थाम लो। बताऊँ, मुझे कैसे पता? रूप बिहारी के पीछे रुपया फूँक रहा था। मैंने रोका। आठ हज़ार खर्च किए उसने। कहाँ से आए?”

वह अवाक् रह गई। “यह झूठ है।” फिर भी कहा।

“ठीक है, यह भी झूठ है। पर वह माल कहाँ से आया? क्या वह इसी हैसियत का आदमी था? बिहारी के गहने रखता था वह चोरी के। दरोगा अब भी शक करता है।”

वह डर गई। टुकुर-टुकुर देखती रही।

उसने फिर कहा, “शिवलाल का शक गलत था लेकिन उसने उसके पास अँधेरे में एक औरत जाते ज़रूर देखी थी।

“कौन-सी औरत?” उसका स्वर काँप गया।

“अब यह मुझसे मत पूछो।” किशनलाल ने कहा, “बहुत-सी बातें कही नहीं जा सकतीं, उन्हें लेकर मन में घुटते रहना पड़ता है। क्यों? क्योंकि उसमें अपनी इज़्ज़त जाती है और हाथ कुछ आता नहीं। ठीक जैसे तुम चमेली और प्रैम को मिटाना चाहती हो। तुम चाहती हो, ये रंडियाँ बनकर कोठों पर बैठें? उससे तुम्हारी इज़्ज़त बढ़ेगी मैं चाहता हूँ कि गुनाह की सजा उसके करने वाले को मिले। औरों को नहीं। क्या जब रूप ने पाप किया था, तब तुम्हारा भी उसमें साझा था? मैं चाहता हूँ कि प्रैम मदन से शादी करके घर में सुख से रहे। चमेली को तुम न रखो, वह रखे। मुझे क्या चाहिए। मदन सँभाल ले। मैं तो सब छोड़कर जाना चाहता हूँ। जिसने किया है। वह सज़ा पाता रहेगा। मैं कौन हूँ? दण्ड तो ऊपर वाला देता रहेगा। पर देगा जरूर। पाप छिपता नहीं।”

“पर वह औरत कौन थी?” सोमोती ने फिर पूछा। उसका मन डाँवाडोल हो रहा था।

“मुझसे ही पूछोगी? मैं ही कहूँ वह बात जो कहने लायक कोई नहीं होता?”

“मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ। बता दो! अगर शिवलाल ने अपनी बहन की इज़्ज़त के लिए हाथ उठाया तो वह दोसी नहीं था। पर वह थी कौन?”

“क्या करोगी जानकर? तुम बदला लोगी? मैं तो नहीं लेता। बिगड़ा तुम्हारा नहीं। उसमें तो जो है सो मेरी इज़्ज़त जाती है। मेरा दोस्त मेरी इज़्ज़त लूटे। तो मैं क्या करूँ?”

“क्या मतलब! जावित्री थी?” वह हठात् कह उठी।

“मत कहो, मत कहो,” उसने हाथों में मुँह छिपाकर कहा, “कभी नहीं कहता, मगर बेकसूरों की ज़िन्दगी मुझसे बर्बाद होते नहीं देखी जाती।”

उसका गला आँसुओं से रुँध गया।

सोमोती उसे ऐसे देखती रही जैसे कोई महान् व्यक्ति सामने था। वह पति के विश्वासघात और पाप के कारण अपने विश्वास की इमारत के गिरते ही, उसके दोष का अपराधी अपने को समझ रही थी, क्योंकि जावित्री उसी के कारण आती थी।

किशनलाल ने आँसू पोंछकर कहा, “भले घरों में ऐसा कहाँ होता है भाभी! मैं जावित्री को तुम्हारे बल पर भेजता था। पर रूप ऐसा होगा, इसकी किसे आशा थी!”

सोमोती ने कहा, “हो सकता है, यह झूठ हो। तुम्हें अपनी बहू पर ऐसा दोस लगाते सरम नहीं आती? और वह भी अकारन? तुम्हारे पास कोई सबूत है?”

किशनलाल ने कहा, “दे दूँगा तो?”

“तो मैं मान जाऊँगी।”

“क्या?”

“कि तुम ठीक कहते हो।”

“उससे क्या फरक पड़ता है? कहो—चमेली मेरे घर रहेगी।”

“रहेगी।” उसने सकपकाकर कहा।

“बाकी में सँभाल लूँगा। तुम्हें दुकान पर नहीं जाने दूँगा, चक्की सँभलेगी, खेत सँभलेगा, तुम्हारा बच्चा चट्टान-सा खड़ा कर दूँगा, लेकिन तुमको यह कहना पड़ेगा कि लाला! यह सब हुआ मेरे लिए, पर तेरे लिए मैं कुछ नहीं कर पाई। कहोगी?”

“कहूँगी।”

“तो चलो। उठो। मेरे पीछे घर जाओ, मेरे घर।”

“क्यो?”

“मैं कहता हूँ। मैं भीतर रहूँगा। तुम बाहर से सुनना।”

वह आगे चला। पीछे-पीछे चली सोमोती। उस समय आँगन में चमेली कपड़े धो रही थी। प्रैम उन्हें खंगार रही थी। किशन छत से पहुँचा। चमेली और प्रैम उन्हें नहीं देख पाईं। जावित्री कोठे में लेटी थी।

किशन ने प्रवेश किया तो वह उठ बैठी।

किशन बैठा। बीड़ी सुलगाई।

“कहाँ गए थे?” उसने पूछा।

“कहीं नहीं। यहीं गाम में था। दरोगा कहता था कि शिवलाल ने बयान दिया है।”

“क्या?”

“कि मैं यह समझकर गया था कि रूप ने मेरी बहन प्रैम को फुसला लिया था।”

“प्रैम को!!” वह काँप उठी।

“इसी से उसने वहाँ जाकर उसका खून कर दिया।”

जावित्री ने लम्बी साँस ली।

“लेकिन,” उसने फिर कहा, “शिवलाल ने एक गहना पुलिस को दिया है कि जिस औरत का यह है, वही उसके पास थी। खोज की जाए। वकील कहता है कि वह शायद उससे छूट जाए—गुस्से में बहन की इज़्ज़त बचाने को खून करके खूनी छूट सकता है। पुलिस आने वाली है। अब अगर किसी ने पहचान ली कि वह कौंधनी तेरी है तो तू तो बदनाम हो ही गई, पकड़ी भी जाएगी।”

जावित्री के मुँह से निकला, “मेरी कोई कैसे कह देगा? तुम्हारे सिवाय कौन जानता है कि वह मेरी है। उसमें तो बिहारी फँसेगा।”

कहने को तो कह गई, पर फिर ध्यान आया तो घुटनों में मुँह छिपा लिया, जैसे धरती फटे तो उसमें समा जाए।

बाहर पगचाप सुनाई दी, जैसे कोई भागा। किशनलाल उठकर भाग चला। सोमोती भागकर आ गई थी। उसका हृदय फटा जा रहा था। वह खाट पर सिर रखकर फूट-फूटकर रो रही थी। अपमान, घृणा, लज्जा से उसका सिर फट रहा था।

किशनलाल खाट पर बैठ गया। उसके सिर पर हाथ फिराकर कहा, “रोती क्यों है भाभी! सुन लिया?”

“सुन लिया लाला! इससे मौत अच्छी।” फिर उसने उसके पाँवों पर सिर रखकर कहा, “तुम मानुष नहीं देवता हो। इतना बड़ा मन किसका हो सकता है। तुम असली महात्मा हो।”

“मैं एक बहुत दुखी आदमी हूँ सोमोती,” उसने अपने सिर पर हाथ फिराते हुए कहा, वैर से वैर घटता नहीं, बढ़ता है। घिन से घिन बढ़ती है।”

सोमोती ने उसके पाँव पकड़कर रोते हुए कहा, “तुम मानुष नहीं, देवता हो लाला...”

वह उठकर खड़ा हो गया। बोला, “नहीं, नहीं, छूना नहीं...औरत की छाया से साँप भी अन्धा हो जाता है...”

सोमोती वेदना और लज्जा से पानी-भरे नेत्रों से देखती रही। और बोली, “तुम्हारे मन को जो दुःख पहुँचा है, उसी से तुम बेकल हो गए हो...दुनिया की सभी औरतें एक-सी नहीं होतीं। सभी मर्द भी तो एक से नहीं होते...एक वे थे...एक तुम हो...”

“कोई हो न हो, अपना क्या! मैंने तो अपना काम कर दिया। अब तुम जानो, तुम्हारा काम जाने। शिवलाल छूट सकता है अभी। लेकिन उसमें मेरी बदनामी है। तुम कह दो तो उठा लूँ।”

“पापी को दंड मिलना चाहिए न कि बे पाप को।”

“ठीक है, यही मैंने भी सोचा था,” किशनलाल ने बैठकर कहा, “लेकिन कसूर शिवलाल का ही है। क्या बिना जाँच किए किसी की हत्या करना ठीक है? खूनी वह है, इसमें क्या शक है? रहा यह कि जावित्री ने कुछ भी किया, उसका मुझसे ताल्लुक है। मैं भुगतूँगा उसे। फिर सोचता हूँ कि जावित्री अब तो पकड़ में आ गई, मगर तब तो नहीं

कहेगी! और फिर बिहारी! वह भी सदा को जेल जाएगा। मुझे बदरी को देखना है भाभी, जिसने यह सारे बीज बोए हैं, लेकिन मेरे पास धन नहीं है। तुम एक काम करो!"

"जो कहोगे करूँगी।"

"मैं तो चला जाता हूँ उत्तराखंड, तुम किसी से न कहना। हिमालय की शान्ति में कहते हैं, भगवान रहते हैं। इस झंझट, इस द्वेष, इस कलह, सबसे छूट जाऊँगा वहाँ। माँग के खा लूँगा। न मिलेगा तो पेड़ों के पत्ते खा लूँगा। बड़ा सुखी होगा जीवन। पर तुम मदन का ब्याह प्रैम से करा देना, चमेली को रख लेना। हमारे खेत हैं, मदन देख लेगा, पर तुम देखना कि मदन दोनों जून उस अभागिन जावित्री को खाना दे दे, कपड़े दे दे। और उसे क्या चाहिए अब? किए की इतनी सज़ा ही बहुत है। इससे ज़्यादा देने वाले हम हैं भी कौन? मदन और हरचरन और मंगल हैं ही। तुम्हारा काम सँभालते रहेंगे। प्रैम का ब्याह कराओगी तो अहसान मानेगी। मदन कहे में रहेगा। इस बच्चे को लाड़ से बिगाड़ न देना। इसे पढ़ा-लिखाकर अच्छा बनाना। भले ही पैसे कम कमाए, मगर शरीफ बने। तुम्हें भगवान ने दिया है। पापी बचते नहीं, देख लो बिहारी को, शिवलाल को, और सच कह दूँ रूप को। मैं उससे हमेशा कहता था—मत पाप की कमाई ला, बुद्धि बिगड़ जाएगी, मगर वह कब सुनता था मेरी। तुम जानती हो, उसके पास कितना धन था? चलते बखत बताए देता हूँ कि खोज लेना उसके कमरे में, कोठे में, कहीं पर भी। वह छोड़ गया है काफी। बेकार न गड़ा रह जाए। उस धन से हो सकै तो इस बदरी का गर्व मिटाना।"

यह कह वह विरक्त-सा उठ खड़ा हुआ।

"कहाँ जाते हो?" वह बैठे-बैठे बोली।

"समय हो गया।" उसने कहा।

"जावित्री पूछेगी तो मैं क्या कहूँगी?"

"उसका मुँह है पूछने को?"

"पर ऐसे मेरे घर से जाओगे तो मैं कहाँ की रहूँगी?" वह उठ खड़ी हुई।

"क्यों, तुमसे क्या मतलब?"

"मतलब तो कुछ नहीं। पर तुम चले जाओगे तो मुझे कौन देगा रहने? मंगल हरचरन खा जाएँगे सब। कौन होता है किसी का? और मदन! हैं तुम्हारे भैया। पर कल को आँख फिर गई तो मेरे बच्चे का क्या होगा? हर कोई तो तुम्हारे जैसा नहीं होता?"

"जिसको धन दोगी, वह नौकर बनकर रहेगा।"

"धन कहाँ है इतना?"

"ढूँढ़ो जाकर!"

"तुम भी आओ।"

"न, न! तुम्हारा धन मैं नहीं लूँगा।"

"मैं कहती हूँ चलो।" उसने उसके हाथ की ओर हाथ बढ़ाया।

“हाँ-हाँ, छूना नहीं...मैं जो कहोगी मान लूँगा, मगर छूना नहीं,” वह हटकर बोला। लज्जा से उस समय सोमोती का सिर झुक गया। बोली, “तुम्हारा दिल दुनिया से इतनी नफरत करने लगा है!”

उसने उत्तर नहीं दिया। वह जानता था कि रूप भीतर के कोठे में माल रखता था। उसने उसी में प्रवेश किया। सोमोती साथ थी।

“कहाँ है यहाँ?” सोमोती ने कहा।

वह गौर से देखता रहा। फिरा बोला, “तुम देखो!”

कोठा संगीन था। नीचे से मजबूत पत्थर जड़े थे। केवल एक जगह दो पत्थरों के बीच में से चींटियाँ निकल रही थीं।

उसने सिर हिलाकर कहा, “नहीं है, कुछ नहीं है। मुझे धोखा था।” वह बाहर आ गया। सोमोती भी आ गई।

“अब मैं जाऊँ?”

“शाम होने आई। कहाँ जाओगे?”

“कहीं भी। मंगल नहीं आया? बच्चा कहाँ है?” उसने पूछा।

“सोया है। उसे मैं हल्की अफीम चटा देती हूँ।” सोमोती ने उसे गौरव-भरी दृष्टि से देखकर कहा।

“ओह!” वह सिर पकड़कर खाट पर लेट गया। उसने आँखों पर हाथ रख लिया। उँगलियों में से वह कुछ देख सकता था।

सोमोती ने कहा, “तुम थोड़ा लेट लो, शायद मन हल्का हो जाए। मैं जावित्री को देखती हूँ। जाने क्या हाल होगा। मुझे तो डर-सा लग रहा है। कहीं कुछ कर न बैठे।”

वह बच्चे को बगल के कोठे से गोद में लेकर चली गई। द्वार पर से कहा, “मंगल अबेर से आएगा, द्वार उड़का जाती हूँ। चले न जाना।”

वह जैसे सो गया था। बोला नहीं। जब वह चली गई, वह उठा। दबे पाँव कोठे में गया। फिर बाहर आया। कोने में रखी सब्बल उठाके भीतर गया, फिर सन्देह की जगह पर अड़ा के उठाया तो पत्थर उठ आया। भीतर एक बक्स था। उसने खोलकर देखा। नोट, रुपये, गहने, वही सब—जो उसने खुद रूप को दिए थे। उसने जल्दी से उन्हें अँगोछे में बाँधा और बक्स को फिर टटोला। बीच की लकड़ी हिली तो खींच ली। नीचे जो देखा तो आँखें फटी रह गईं। ढेर नोट थे। सैकड़ों नोट थे सौ-सौ के! उसने आतुरता से उन्हें भी गमछे में डालकर बाँधा और फिर सन्दूक बन्द करके पत्थर ढँककर, सब्बल जहाँ की तहाँ रख दी। अब उसका मन थर्रा उठा। इसे ले कैसे जाए! अँधेरा झुक चला था। उसने पुलिन्दा उठाकर एक कोने में रख दिया और फिर लेट गया।

अँधेरा घिर आया। तब वह ऊब गया। परन्तु सोमोती नहीं आई थी। तभी पगचाप सुनाई दी।

सोमोती भीतर आ गई। वह लेटा रहा।

“अरे, तुम सो ही रहे हो?” वह बोल उठी, “मैंने बहू को मना लिया है। वह जार-जार रोती है। मैंने कहा—रो-रोकर बात परगट मत कर। चुप बैठी है, कहती है—कहीं चले न जाएँ। मुझे माफ कर दें। मैं तो जूती बनकर रह लूँगी। उनके रूठे पर मेरा कौन है?”

“वह है कहाँ?”

“घर है। बत्ती कर दूँ। तुम रोटी खाकर जाना।”

“कहाँ?”

“अभी सेंके देती हूँ।”

“नहीं,” वह अँधेरे में ही खड़ा हो गया और पास रखे कम्बल को उठाकर बोला, “मैं ये कम्बल ले लूँ?”

“क्या करोगे?”

“जाऊँगा।”

उसने कम्बल ले लिया।

“नहीं।” सोमोती ने कहा।

“मेरी गलती थी।” किशनलाल ने कहा—“कम्बल मुझे नहीं माँगना चाहिए था।” उसने कम्बल उठाकर कोने की गठरी पर फेंक दिया। सोमोती विक्षुब्ध हो गई। बोली, “मैं कम्बल की नहीं कहती थी, तुम्हारे जाने को कहती थी।”

“क्यों रोकती हो मुझे?”

“तुम्हारे साथ अन्याय हुआ है। मैं तुम्हें इस तरह नहीं जाने दूँगी।”

अँधेरा घना था। सोमोती ने उसका हाथ पकड़ लिया। किशन ने फूत्कार किया, “छोड़ दो मुझे! छूओ मत!”

“नहीं छोड़ूगी छूऊँगी!” उसने कसकर पकड़ लिया।

उस अँधकार में किशनलाल ने उसके कन्धे पर हाथ रखकर कहा, “सच सोमोती! तू बड़ी अच्छी है।”

“तुम जानते हो! आज तक किसी ने नहीं कहा।”

“भगवान अन्याय करता है। उसने अमनेल मेल कर दिया। अगर जावित्री रूप की होती, और तू मेरी, तो दुनिया कितनी अच्छी होती। लेकिन ऐसा नहीं हुआ।”

और उसकी आँख से टपका आँसू सोमोती के गाल पर जा गिरा।

“तुम रो रहे हो?” “उसने भर्राए स्वर से कहा।”

“मैं क्या करूँ?” उसने उसे हटाकर कहा और खाट पर घुटनों पर कुहनियाँ टेककर हथेलियों में मुँह छिपा लिया। वह भी खाट पर बैठ गई बगल में और उसके सिर पर हाथ फिराकर कहा, “रोओ मत! मैं तो तुम्हारे पास हूँ।”

“तुम मेरे पास हो?” उसने उसके कन्धे पर सिर धर दिया और उसकी भुजाओं को पकड़कर कहा, “तुम तो मुझे धोखा नहीं दोगी?”

“नहीं! कभी नहीं!”

“तुम झूठ कहती हो!”

“मैं सच कहती हूँ।” उसने आश्वासन के रूप में हाथ उसकी गर्दन पर रख दिए। देर तक वे उस ऊष्मा का अनुभव करते रहे। उस स्पर्श में माँसल जीवन अपनी अभिव्यक्ति पा रहा था। और किशन के गर्म-गर्म श्वास सोमोती के श्वासों से टकरा गए।

कहीं कोई खाँसा। अँधेरे में ही वह उठ खड़ा हुआ।

“अब तो नहीं जाओगे?” सोमोती ने पूछा।

“तुमने मुझे फिर से बाँध लिया भाभी। तुम्हारे कर्ज़े को चुकाऊँगा। तुमने टूटे काँच को जोड़ दिया। तुम्हारा बच्चा बड़ा हो, फले-फूले।”

वह बढ़ा और कम्बल उठा लिया। कम्बल के साथ गठरी भी। बोला, “इसे लिए जाता हूँ। यह आज की मुझे सदा याद दिलाती रहेगी।”

सोमोती ने कुछ नहीं कहा। धड़कते दिल से किशनलाल घर आ गया। वह भीतर पहुँचा। पहले गठरी छिपा दी, फिर कम्बल रख दिया। जावित्री किवाड़ की ओट आ गई।

किशनलाल ने कहा, “खाने को कुछ बनाया है?”

“लाती हूँ।” कहकर वह चली गई। थाली लगा के लौटी, सामने रखी और डंडौत की। चरन-रज माथे से लगाई और आँसू पोंछते हुए हट गई।

किशन ने हँसकर कहा, “पगली! गलती किससे नहीं होती! रोती है! हूँ :!!”

बैठकर चैन से खाना खाया और फिर बीड़ी सुलगाई। धुआ उड़ने लगा। आज उसकी प्रतिहिंसा शान्त हो चुकी थी। अब जीतने को केवल बदरी रह गया था। एकाएक वह उठ खड़ा हुआ। उसने कौंधनी निकाली और कपड़ों में छिपा ली।

उस समय बदरी बैठा हुक्का पी रहा था।

देखते ही चौंका। किशन के चेहरे पर मुर्दनी छा रही थी।

“कौन पंडित! तुम!”

“हाँ बौहरे!” वह हताश-सा बैठ गया, “मैंने तुम्हें बहुत धोखा दिया है न? इसका फल मुझे ऊपर वाले ने दिया। भैया गए! गए न?” उसने आँखें पोंछ लीं।

बौहरा सशंकित हो गया। बोला, “गरीब की आह यों ही नहीं जाती पंडित! कभी न कभी रंग लाती है।”

“लाती है! ज़रूर लाती है! कौन मना कर सकता है!” उसने कहा।

“आज कैसे आए?”

“प्रासचित करने आया हूँ बौहरे, पर डर लगता है, कहीं तुम पुलिस में बन्द न करवा दो।”

“कैसे?”

उसने नोटों की गड्डी निकालकर सामने धर दी और कहा, “कबूल करो। ना न करना। कह दो, जो लिया था सो चुका गया!”

बदरी ने गिने। पूरे तीन हज़ार थे। सौ-सौ के नोट थे। आँखें फट गईं। मनुष्य इतना भला भी हो सकता है, यह एक नया अनुभव था। उसने उसकी ओर देखा। आँखें आँसुओं से भरी थीं। बदरी ने उसे सीने से लगा लिया।

“तुमने मुझे माफ कर दिया बौहरे! मैं इतने दिन तक मजबूर था।”

“कैसी बातें करते हो पंडित!” बदरी ने रुपये उठाकर तकिये के नीचे रख लिए।

किशन ने फिर कहा, “बोहरे! पाप का फल अच्छा नहीं होता। अब एक बात कह दूँ। मेरा मन फट रहा है।”

“कह दो भैया! एक मैं पापी हूँ, जिसके कारण तुम्हारे भैया के प्राण गए।”

बदरी ने सिर झुका लिया।

‘रहने दो, नहीं कहूँगा’ किशनलाल ने कहा, “पर नहीं। अब छिपाने से क्या लाभ? वे तो रहे नहीं। जो चीज़ उन्हें खा गई वह मैं अपने पास न रखूँगा। यह लो अपनी अमानत।” उसने कौंधनी निकालकर सामने रख दी। बदरी ने पागल की तरह उसे पकड़ लिया।

“तुम लाए हो! देवता!” बदरी ने उसके पाँव पर सिर धर दिया। फिर उसे परखा। बोला, “वही है! वही है! तुममें इत्ता दम है?”

“भैया ने रखी थी। बिहारी ले गया था। मैंने तो तब भी इशारा किया था तुम्हें। पर तब मेरा मुँह बन्द था। क्या ले गए वह अपने साथ? कहाँ है बिहारी अब? इस धन के पीछे क्यों आदमी पागल हो जाता है बदरी बोहरे!”

बदरी समझ नहीं पाया कि इस उपकार का बदला कैसे दे। बोला, “तुम देवता ही नहीं, तुम तो भगवान हो। साच्छात भगवान!”

जब किशन उसके घर से आ गया, अपने-आप अँधेरे में उसके पाँव थाने की ओर उठ चले। दरोगा जी इधर शिवलाल के मामले में काफी मिल चुके थे। बिठाया।

“कैसे आए पंडत जी?” पान चबाते हुए कहा।

“यों ही हुज़ूर। बखत की बात है। हमारे भाई मार डाले गए, मगर सज़ा उसे नहीं मिली जिसका कसूर है।”

“क्या कहते हो! बदरी तो लुट गया?” दरोगा जी ने चौंककर कहा।

“वह बड़ा जाली है।” किशन ने कहा, “बड़ा ज़ालिम है। अजी घर में माल रखकर थाने में चोरी लिखा दे और किसी को भी पकड़वा दे। उसके पैसे में दम है।”

“क्या बकते हैं पंडत जी!” दरोगा ने कहा, “उस साले की इतनी मजाल कि हमें चकमा दे जाए!”

“तो हुजूर! पुलिस क्या चकमेबाजों का महकमा है? कभी आपने तलाशी भी ली?”

“आपको कैसे पता उसके यहाँ माल निकलेगा?”

“हुज़ूर, वो इनकम टैक्स देता है? जब इत्ता बड़ा बौहरा है तो जरूर देता!”

“नहीं देता, उससे क्या, बहुत-से नहीं देते!”

“हुज़ूर ने पकड़वाया?”

“हम क्यों पकड़वाएँ कोई मुखबिर बने तो ही हम आगे कदम रखते हैं। आप शक की बिना बताएँ। देखिए, फिर क्या करते हैं!”

“हुज़ूर खफा होंगे। लोग तो यों डरते हैं कि बता भी दें, पर आगे मामला चलता नहीं। मुखबिर घिर जाता है।”

“अजी इस मामले में नहीं। एक आदमी मर चुका है।”

“मगर बदरी हज़ारों धर देगा आपके कदमों में।”

“देखेंगे उसे भी! तुम शक बताओ।”

“हुज़ूर, बात यह है। उसने जिन चीज़ों की लिस्ट बताई है। वो में देख लूँ।”

“बताना जी!”

दीवान जी ने मठारकर कहा, “बताता हूँ हुज़ूर!”

वे सुनाने लगे। ज्योंही कौंधनी का नाम आया, किशनलाल ने कहा, “बस सुन लिया हुज़ूर। बता दूँगा। मगर गरीब सताया हुआ है। आगे भले ही छोड़ दें। गवाही कमज़ोर करके, मगर बन्द वो होगा और झूठी रिपोर्ट लिखाने के लिए 182 उस पर चलेगी। मेरी बस यही शर्त है।”

“मंजूर।”

“तो उसकी तलाशी इसी वक्त ज़बर्दस्ती लीजिए। कौंधनी उसके पास है। कह रहा था वह अपने घर के सामने किसी से—मैं अँधेरे में देख न पाया।”

“क्या कह रहा था?”

“कहता था हुज़ूर ज़रा बात बेअदबी की है...आप बुरा मान जाओगे!”

“कहो जी तुम!” दरोगा जी ने उत्सुकता से कहा, “किससे कह रहा था?”

“मैं जानूँ शम्भू था, पर पक्की नहीं कह सकता, शायद कोई और हो। वो कहता था—अबे जा! दरोगा को तो चाँदी की जूतियाँ मार के ठीक कर दूँगा। मगर वो माल अब जल्दी हटवा दे, वर्ना ठीक नहीं है ज़्यादा खतरा मोल लेना!”

“स्साला!” फिर दरोगा जी ने पुलिस मदरसे की भारी गालियाँ दीं, जिनका असर गोलियों से ज़्यादा था, “उसकी ये मजाल! हमें जूती तो देख साले जूता! देख हमारी ठोकर! दीवान जी!”

“हुज़ूर!” वही घिसी आवाज़ आई, नपी-तुली।

“पर हुज़ूर,” किशन ने कहा, “गवाह आप दस तैयार कर ही सकते हैं, मेरा नाम न दें, क्योंकि मैं रामलाल का भाई हूँ, और बिहारी का पैरोकार भी।”

“ठीक है,” दरोगा ने उठते हुए कहा, “मगर साला जाएगा कहाँ!”

जब वह बाहर आ गया तब दीवान जी भी साथ आए।

बोले, “क्या बात है?”

उस भोले-भाले आदमी के हाथ पर दस रुपये का नोट रखकर किशन ने कहा, “समझ गए?”

“समझ गया यार!” उन्होंने गद्‌गद् होकर कहा, “साला अभी बन्द हो जाएगा। फिक्र मत करो। माल निकलना चाहिए।”

बात की बात में गाँव में खबर फैल गई कि पुलिस बदरी बौहरे की तलाशी ले रही है। भीड़ इकट्ठी हो गई। और तब सबने देखा कि एक कौंधनी लालटेन की रोशनी में दरोगा जी के हाथ में हिल उठी। दीवान जी ने लपककर उसे पकड़ लिया।

बदरी का घिघियाना भीड़ के क्रुद्ध कोलाहल में डूब गया। “औ रंडुए भैंसे! तेरा आगे-पीछे था कौन जिसके लिए तूने यह सब किया! रामलाल को जान से मार डाला?”

बदरी धूल में मिल गया।

उपसंहार

सारा गाँव कहता है कि पापी को फल मिलता है, सो बदरी को मिल गया। बड़े-बूढ़े कहते हैं कि उसके राज में देर है, अँधेर नहीं। पंडित कहते हैं—रावण भी तब मरा था जब ऋषियों की हड्डियाँ उसने धूप में सुखा ली थीं। ऐसे ही रामलाल और बिहारी तबाह हो गए, बलिदान दे गए। ऐसे आदमी ही मर-गिरकर धर्म की स्थापना करते हैं। लोगों में एक नज़ीर है कि पापी का संगी भी डूबता है, तभी शम्भू भी जेल में है। सड़कों पर जो आदमी चिल्लाता फिरता है वह बिहारी है, जो कभी हँसता है, कभी रोता है। उसे कोई दयालु भीख दे देता है तो खा लेता है।

घर का लालच बुरी चीज़ है। उसके लिए कतल करके शिवलाल फाँसी पर चढ़ गया। चढ़ना ही था।

मगर देखो, किशनलाल भला आदमी है। उसने बिगड़े-उजड़े घर को बचा लिया वर्ना औरतों का क्या हाल होता!

मदन की बहू प्रेम कहती है कि किशनलाल मनुष्य नहीं देवता है। चमेली कहती है, वह स्वयं भगवान है। जावित्री कहती है, वह तो भोलानाथ है और सोमोती कहती है कि वह तो भगवान शिव है, जिन्होंने दूसरों के लिए ज़हर पी लिया था...चार औरतें एक स्वर से बोलती हैं, तो सारे गाँव की स्त्रियाँ कहती हैं... ।

लोग-बाग अपने लड़कों से कहते हैं, इधर-उधर डोलकर बखत मत बिगाड़ो। जब भगवान ने ऐसा आदमी दिया है तो उससे कुछ सीखो। देखो, किशनलाल कैसी-कैसी ज्ञान की बातें करता है। ऐसे आदमी कभी-कभी पैदा होते हैं।

❑❑❑